भारत का विधि आयोग

भारत सरकार

अभिरक्षा में स्त्रियों

पर

एक सौ पैंतीसवीं रिपोर्ट

1989

भारत का विधि आयोग

अभिरक्षा में स्त्रियों
पर
एक सौ पैंतीसवीं रिपोर्ट

1989

एम० पी० ठक्कर,
अध्यक्ष

विधि आयोग,
भारत सरकार,
शास्त्री भवन,
नई दिल्ली
14 दिसंबर, 1989

अ० शा० सं० 6(3) (10)/88/वि० आ० (एल० एस०)

सेवा में,
श्री दिनेश गोस्वामी,
विधि और न्याय मंत्री,
भारत सरकार,
शास्त्री भवन,
नई दिल्ली

प्रिय मंत्रीजी,

135वीं रिपोर्ट के पेश करने के बारे में ।

वर्तमान रूप में गठित आयोग ने स्वप्रेरणा से दो रिपोर्ट पहले ही प्रस्तुत की हैं जिनका उद्देश्य स्त्रियों की व्यथाओं को दूर करना था, अर्थात्—

132वीं रिपोर्ट जिसका शीर्षक—"उपेक्षित स्त्रियों, बालकों और माता-पिता के कष्ट में सुधार करने और उनके संताप को कम करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता, 1972 के अध्याय 9 के उपबंधों के संशोधन की आवश्यकता"

और

133वीं रिपोर्ट जिसका शीर्षक—"अप्राप्तवय बालकों की संरक्षकता और अभिरक्षा से संबंधित मामलों में स्त्रियों के विरुद्ध विभेद को दूर करना और कल्याण सिद्धांत का विस्तार" है ।

उसके पश्चात् 134वीं रिपोर्ट पेश की गई । इसमें नियोजन के अनुक्रम में नियोजन-जन्य क्षतियां पाने वाले कर्मकारों और घातक दुर्घटनाओं में अंतर्वलित मृत कर्मकारों के आश्रितों की दशा में सुधार करना परिकल्पित था । इसका शीर्षक था—

"कर्मकार प्रतिकर अधिनियम, 1923 के कुछ उपबंधों में कमियों को दूर करना" ।

इस पत्र के साथ प्रस्तुत की जा रही रिपोर्ट—135वीं रिपोर्ट "अभिरक्षा में स्त्रियों" की समस्याओं पर केंद्रित है । यह रिपोर्ट तत्समय विधि और न्याय मंत्री द्वारा आयोग को किए गए उस निर्देश का परिणाम है जो "स्त्री कैदियों" पर राष्ट्रीय विशेषज्ञ समिति की (2 जिल्दों में) रिपोर्ट की प्रति, उनके 13 दिसंबर, 1988 के पत्र के साथ, भेजते समय किया गया था ।

आयोग ने रिपोर्ट के अनुक्रम में दंड प्रक्रिया संहिता में एक पृथक् अध्याय जोड़ने का सुझाव दिया है जिसमें अभिरक्षा में स्त्रियों की संरक्षा करने के लिए प्रकल्पित रक्षोपाय समाविष्ट किए गए हों जिससे कि पुलिस और जेल प्राधिकारी, आपराधिक मामलों से संबद्ध स्त्रियां तथा सक्रिय स्त्री कल्याण संगठन, रक्षोपायों के संबंध में जानकारी प्राप्त कर सकें और पूर्वकथित अर्थात् पुलिस और जेल प्राधिकारी उनका पालन कर सकें

और पश्चात्कथित अर्थात् स्त्रियां और सक्रिय स्त्री कल्याण संगठन उनका पालन प्रवर्तित करा सकें । यह आशा है कि इन सिफारिशों से, यदि और जब ये स्वीकार की जाती हैं, अभिरक्षा में स्त्रियों की समस्याओं का पर्याप्त समाधान होगा ।

अभिवादन सहित,

भवदीय,

ह०

(एम० पी० ठक्कर)

संलग्नक : 135वीं रिपोर्ट

विषय-वस्तु

		पृष्ठ
अध्याय 1	प्रस्तावना	1
अध्याय 2	दंड प्रक्रिया संहिता : अभिरक्षा में स्त्रियों से सम्बन्धित उपबंध—कमियों की पहचान और की गई सिफारिशें	3
अध्याय 3	दंड प्रक्रिया संहिता : अभिरक्षा में स्त्रियों का लैंगिक दुरूपयोग	15
अध्याय 4	सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 और अभिरक्षा में स्त्रियां	17
अध्याय 5	अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958	18
अध्याय 6	मानसिक स्वास्थ अधिनियम, 1987	21
अध्याय 7	अभिरक्षा में स्त्रियों से संबंधित अन्य विधियां	24
अध्याय 8	चल न्यायालय	26
अध्याय 9	कारागारों से संबंधित स्थिति	28
अध्याय 10	निष्कर्ष और सिफारिशें	29
उपाबंध 1	विभिन्न अधिनियमितियों में प्रारूप संशोधनों के रूप में सिफारिशें	33
उपाबंध 2	कैदियों के सम्बन्ध में हाल के कुछ विनिर्णयों की सूची, टिप्पण और निर्देश	42

अध्याय 1

प्रस्तावना

1.1 उत्पत्ति और विस्तार—यह रिपोर्ट अभिरक्षा में स्त्रियों से संबंधित कुछ प्रश्नों के सम्बन्ध में है और विधि और न्याय मंत्रालय द्वारा आयोग को किए गए निर्देश के अनुसरण में तैयार की गई है ।

विधि और न्याय मंत्री ने युवक और खेलकूद, स्त्री और बालक विकास विभाग राज्य मंत्री की आज्ञा से स्त्री कैदियों पर राष्ट्रीय विशेषज्ञ समिति द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट की एक प्रति भेजी है । राज्य मंत्री ने आयोग से रिपोर्ट जिल्द-1 से उत्पन्न दो विषयों की जांच करने का अनुरोध किया है—एक विषय जो चल न्यायिक शिबिरों की प्रकृति के नारी बंदीगृह अदालतों के सम्बन्ध में है । (रिपोर्ट जिल्द-1 का पैरा 478 देखिए) और दूसरा विषय अभिरक्षा में स्त्रियों की प्रास्थिति और अपराधिता से संबंधित विभिन्न विधायनों की प्रभावकारिता और सुसंगति के संबंध में है । (रिपोर्ट का पैरा 480.4 देखिए) । रिपोर्ट के पूर्वोक्त पैरे अर्थात् 478 और 480.4 निम्न प्रकार हैं—

> "478. पृथक् स्त्री न्यायालयों या कुटुम्ब न्यायालयों के अतिरिक्त यह सिफारिश की जाती है कि अभिरक्षा में स्त्रियों को शीघ्र प्रतितोष देने के लिए तुरन्त उपाय के रूप में चल न्यायिक शिबिरों की प्रकृति की नारी बंदीगृह अदालतें आयोजित की जाएं । जबकि कुटुम्ब न्यायालय या स्त्री न्यायालय स्थिर स्थायी निकाय हो सकता है, चल अदालतें या न्यायालय तुरन्त और तत्कालिक सुधारक कदम के रूप में अपेक्षित हैं । ऐसे शिबिर और न्यायालय पिछले लंबित मामलों के निपटारे के लिए भी और शीघ्र न्याय प्रदान करने के लिए समाज कल्याण और मानसिक स्वास्थ अभिरक्षा संस्थाओं में अर्जेंट और नेमी रूप से आयोजित किए जाने चाहिए । चल अदालतें जिलावार या समूह आधार पर संचालित की जानी चाहिए जिससे सभी कारागार और गैर-कारागार अभिरक्षा संस्थाओं के संबंध में कार्यवाही हो जाए । इसके उद्देश्य शीघ्र न्याय का उपबंध करना होने चाहिए ।
>
> **480.4.** अभिरक्षा में स्त्रियों की प्रास्थिति और उनकी अपराधिता से संबंधित विभिन्न विधायनों की प्रभावकारिता और सुसंगति का आलोचनात्मक निर्धारण अन्य ख्यातिप्राप्त विधिक सामाजिक विज्ञान और सामाजिक सुरक्षा निकायों के साथ परामर्श से विधि आयोग द्वारा अपने हाथ में लेना चाहिए और उनके निष्कर्ष दंडित न करने, अनपराधीकरण, विसंस्थाकरण आदि के रूप में यथार्थ सुधार के लिए आधार होने चाहिएं ।"

1.2. विचार के लिए प्रश्न—ऊपर कथित निर्देश पत्र में दो विषयों पर विचार करना अनुध्यात है जिनमें से एक सीमित प्रकृति (चल-न्यायालय) का है जबकि दूसरा एक अधिक साधारण प्रकृति का है । विचाराधीन स्त्रियों के लिए पृथक् न्यायालय के सृजन का प्रश्न ऐसा है जो न्यायालयों के गठन और प्रशासनिक मामलों के सम्बन्ध में है । अभिरक्षा में स्त्रियों और उनकी अपराधिता के सम्बन्ध में विभिन्न विधायनों के आलोचनात्मक निर्धारण के लिए किए गए अनुरोध के परिणामस्वरूप विभिन्न कानूनों में बिखरे हुए उपबंधों की जांच करनी होगी जिसके अंतर्गत मानसिक रूप से बीमार व्यक्तियों से सम्बन्धित संस्थाओं में स्त्रियाँ हैं । ऐसा प्रतीत होता है कि इन कानूनी उपबंधों की जाँच करने में निम्नलिखित अधिनियमितियों का अध्ययन करना होगा :—

(क) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 जहां तक कि अभिरक्षा में स्त्रियों से सम्बन्धित कोई उपबंध उसमें है ।

(ख) भारतीय दंड संहिता जहां तक कि वह अभिरक्षा में स्त्रियों के विरुद्ध लैंगिक अपराधों से सम्बन्धित है ।

(ग) सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—अभिरक्षा में स्त्रियों से सम्बन्धित उपबंध ।

(घ) अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 जहां तक उसके उपबंध स्त्री प्रथम अपराधियों पर कोई विशेष विचार करने के सम्बन्ध में मौन हैं ।

(ङ) संघ सूची या समवर्ती सूची के भीतर किसी विषय पर किसी अन्य विधि में उपबंध जो स्त्रियों की गिरफ्तारी और निरोध से विशिष्ट रूप से सम्बन्धित हैं ।

1.3. अपनाई गई रीति—जबकि हम इस रिपोर्ट में ऊपर वर्णित प्रश्नों पर चर्चा करेंगे अभिरक्षा में स्त्रियों से सुसंगत विभिन्न विधियों का पहले निर्धारण करना और तत्पश्चात् अभिरक्षा में स्त्रियों को शीघ्र प्रतितोष देने के लिए चल न्यायालयों के सृजन से सम्बन्धित सुझाव की जांच करना सुविधाजनक होगा ।

अध्याय 2

दंड प्रक्रिया संहिता

अभिरक्षा में स्त्रियों से सम्बन्धित उपबंध—कमियों की पहचान और की गई सिफारिशें

2.1. संहिता में रक्षोपाय—उन स्त्रियों के दिक किए जाने और शोषण को रोकने के लिए, जिन्हें विधि के अतिक्रमण के लिए कारागार में भेजे जाने का दुर्भाग्य रहा है, विधि की चिंता, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के विभिन्न उपबंधों में जो स्त्रियों की गिरफ्तारी और निरोध की बाबत साधारणतया किए गए हैं जिनके अंतर्गत विशेष रूप से किसी अपराध के लिए अभियुक्त स्त्रियां हैं, प्रकट की गई हैं । दृष्टान्तस्वरूप गिरफ्तारी के समय स्त्रियों की तलाशी के बारे में विधि ने यह उपबंध करने के लिए यह सावधानी बरती है कि कोई पुरुष पुलिस अधिकारी किसी स्त्री की तलाशी लेने के लिए अनुज्ञेय नहीं होगा । यदि किसी अभियुक्त व्यक्ति की, चाहे पुरुष हो या नारी, चिकित्सीय परीक्षा की जानी है तो स्त्रियों के बारे में कुछ रक्षोपायों का उपबंध किया है । इसके अतिरिक्त निस्संदेह दैहिक स्वतंत्रता के क्षेत्र में लागू संवैधानिक और विधिक रक्षोपाय स्त्रियों को उसी मात्रा तक उपलब्ध हैं जितनी तक वे अन्यों को उपलब्ध हैं ।

फिर भी दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के विभिन्न उपबंधों की जांच करने पर यह प्रकट होता है कि ब्यौरे की कुछ बातों में ऐसी स्त्रियों को पर्याप्त संरक्षण प्रदान करने के लिए और रक्षोपायों के लिए गुंजाइश है । इस बारे में विस्तृत सुझाव अगले कुछ पैराओं में दिए जाएंगे ।

2.2. दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 46 : गिरफ्तारी—हमारी विधि में पुलिस द्वारा या विधि प्रवर्तन की सहायता में कार्य करने वाले अन्य व्यक्तियों द्वारा गिरफ्तारी की रीति के बारे में कुछ विस्तृत नियमों का उपबंध है । दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 46 में अधिकथित है कि गिरफ्तारी करने में पुलिस अधिकारी या अन्य व्यक्ति, जो गिरफ्तारी कर रहा है, गिरफ्तार किए जाने वाले व्यक्ति के शरीर को वस्तुतः छुएगा या परिरुद्ध करेगा जब तक उसने वचन या कर्म द्वारा अपने के अभिरक्षा में समर्पित न कर दिया हो । धारा का शेष भाग वर्तमान प्रयोजन के लिए तात्विक नहीं है । इस धारा की बाबत चर्चा करते हुए विधि आयोग ने बलात्संग और सहबद्ध अपराधों[1] पर अपनी रिपोर्ट में यह विचार अभिव्यक्त किया कि इस प्रभाव का एक उपबंध जोड़ा जाना चाहिए कि स्त्रियों की दशा में अभिरक्षा में उनके समर्पण की उपधारणा की जाएगी जब तक कि अन्यथा साबित न कर दिया जाए और यह कि पुलिस अधिकारी को स्त्री की गिरफ्तारी करने के लिए उसके शरीर को वस्तुतः छूना नहीं चाहिए । इस बारे में आयोग की सिफारिश संहिता की धारा 46(1) में निम्नलिखित परंतुक जोड़ने की थी :

> "परन्तु यह कि जहां स्त्री को गिरफ्तार किया जाना है, तब जब कि परिस्थितियां प्रतिकूल इंगित न करें गिरफ्तारी की मौखिक सूचना पर उसके अभिरक्षा में समर्पण की उपधारणा की जाएगी और जब तक कि परिस्थितियों से अन्यथा अपेक्षित न हो या जब तक कि गिरफ्तारी करने वाला पुलिस अधिकारी नारी नहीं है, पुलिस अधिकारी गिरफ्तारी करने के लिए स्त्री के शरीर को वस्तुतः नहीं छुएगा ।"

हमारी यह राय है कि ऊपर दी गई सिफारिश को एक उपयुक्त उपबंध अधिनियमित करके कार्यान्वित किया जाना चाहिए ।

2.3. गिरफ्तारी का समय—उसी रिपोर्ट[2] में विधि आयोग ने स्त्रियों की गिरफ्तारी के समय के प्रश्न की जांच की और यह विचार अभिव्यक्त किया कि सिवाए अपरिहार्य परिस्थितियों में किसी स्त्री को सूर्यास्त के पश्चात् और सूर्योदय के पूर्व गिरफ्तार नहीं किया जाना चाहिए । इस प्रयोजन के लिए आयोग ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 46 में एक नई उपधारा निम्नलिखित शब्दों में अंतःस्थापित करने की सिफारिश की—

2—5 Min. of L. & J./ND/90

"(4) सिवाए अपरिहार्य परिस्थितियों में कोई स्त्री सूर्यास्त के पश्चात् और सूर्योदय के पूर्व गिरफ्तार नहीं की जाएगी, और जहां ऐसी अपरिहार्य परिस्थितियां विद्यमान हैं, पुलिस अधिकारी लिखित रिपोर्ट करके ऐसी गिरफ्तारी करने के लिए ठीक वरिष्ठ अधिकारी के पूर्व अनुज्ञा अभिप्राप्त करेगा, या यदि मामला अत्यन्त आत्ययिकता का है तो वह गिरफ्तारी करने के पश्चात् गिरफ्तारी के कारणों और उपरोक्त रूप में पूर्व अनुज्ञा न लेने के कारणों सहित मामले की रिपोर्ट अपने ठीक वरिष्ठ अधिकारी को तुरन्त करेगा ।"

इस सिफारिश का भी उपयुक्त रूप से अविलंब कार्यान्वयन आवश्यक है । हम यह अतिरिक्त उपबंध जोडते हैं कि रिपोर्ट सक्षम मजिस्ट्रेट को भी भेजी जानी चाहिए । प्रसंगवश हम यह भी वर्णन कर सकते हैं कि पूर्वतर रिपोर्ट में सिफारिश की गई प्रकृति के एक उपबंध का प्रस्ताव दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक, 1988 के खण्ड 9 में किया गया था (अब व्यपगत हो गया है) ।

2.4. चिकित्सीय परीक्षा : दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 53 और 54—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की अनेक धाराएं अभियुक्त की परीक्षा के सम्बन्ध में है । ऐसी परीक्षा (जो संहिता में अनुध्यात है) दो प्रकार की है । प्रथमत: संहिता अपराध का साक्ष्य सुनिश्चित करने के लिए अभियुक्त की चिकित्सीय परीक्षा से संबंधित है । चाहे ऐसी परीक्षा के लिए अभियुक्त सहमत हो या नहीं । यह अपराध का साक्ष्य सुनिश्चित करने के लिए की जा सकती है (धारा 53) । परीक्षा अन्वेषण अभिकरण की प्रार्थना पर किसी रजिस्ट्रीकृत चिकित्सा व्यवसायी द्वारा की जानी है । जहां संहिता में एक विनिर्दिष्ट उपबंध किया गया है जिसमें यह अपेक्षित है कि किसी महिला अभियुक्त की दशा में परीक्षा किसी महिला चिकित्सा-व्यवसायी द्वारा की जानी चाहिए ।

2.5. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 54 को संशोधित करना—संहिता में एक अन्य प्रकार की परीक्षा अनुध्यात है जहां अभियुक्त अपनी निर्दोषता साबित करने के लिए स्वयं ऐसी परीक्षा की वांछा करता/करती है (धारा 54) । इसी संदर्भ में संहिता में एक छोटा सा सुधार करने की आवश्यकता है । जहां कोई महिला अभियुक्त अपनी निर्दोषता साबित करने के लिए ऐसी परीक्षा की वांछा करती है वहां वह संहिता के सुसंगत उपबंध में उपबंधित सुविधा का उपभोग कर सकती है । किन्तु इस समय संहिता इस बारे में मौन है कि कोई स्त्री किस सीमा तक हठ कर सकती है कि ऐसी परीक्षा किसी महिला रजिस्ट्रीकृत चिकित्सा व्यवसायी द्वारा और शिष्टता का पूरा ध्यान रखते हुए की जाए । विधान मंडल का यह विचार नहीं हो सकता था कि ऐसे उपबंध की आवश्यकता नहीं है । किन्तु अनुमान यह है कि यह बात उस समय ध्यान से निकल गई हो जब इस उपबंध का प्रारूपण किया गया था ।

2.6. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 54, दं० प्र० सं० 1973—किसी स्त्री चिकित्सक द्वारा चिकित्सीय परीक्षा—हमारी सिफारिश है कि यह उपबंध करके संहिता का संशोधन किया जाए कि **जब कभी किसी महिला के शरीर की परीक्षा धारा 54 के अधीन की जानी है तब परीक्षा केवल किसी महिला रजिस्ट्रीकृत चिकित्सा-व्यवसायी द्वारा या उसके पर्यवेक्षण के अधीन और शिष्टता का पूरा ध्यान रखकर की जाएगी** । यह सत्य है कि जब अभियुक्त स्वयं ऐसी परीक्षा के लिए प्रार्थना करती है तब वह एक शर्त भी रखेगी कि परीक्षा केवल किसी स्त्री द्वारा ही की जाएगी । फिर भी हमारे विचार में विधि को इस रक्षोपाय का स्वयं उपबंध करना चाहिए ।

2.7. उत्तर प्रदेश का संशोधन—प्रसंगवश हम यह नोट करते हैं कि धारा 54 का उत्तर प्रदेश में प्रवर्धन 1984 के उत्तर प्रदेश अधिनियम 1 द्वारा निम्नलिखित पैरा अंत:स्थापित करके किया गया है :

"रजिस्ट्रीकृत चिकित्सा-व्यवसायी गिरफ्तार व्यक्ति को ऐसी परीक्षा रिपोर्ट की एक नि:शुल्क प्रति तत्काल देगा ।"

हम सिफारिश करते हैं कि यह प्रतिपादन संहिता में अंत:स्थापित की जानी चाहिए । दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक, 1988 के खंड 14 से तुलना की जाए ।

2.8. अधिकारों की संसूचना—हम दंड संहिता, 1973 की धारा 54 के बारे में एक और सुझाव देते हैं भले ही यह सुझाव स्त्रियों तक सीमित नहीं है । यह स्पष्ट है कि अभिरक्षा में किसी व्यक्ति को धारा 54 द्वारा प्रदत्त प्रकृति के संरक्षण की आवश्यकता है । किन्तु कई बार गिरफ्तार व्यक्ति इस बाबत अपने अधिकार नहीं जानता/जानती है । उच्चतम न्यायालय ने **अन्य बातों के साथ** यह सुझाव दिया है कि मजिस्ट्रेट द्वारा गिरफ्तार व्यक्ति को उसके अधिकार के बारे में जानकारी दी जानी चाहिए यदि उस व्यक्ति को पुलिस[3] द्वारा यातना के विरुद्ध कोई शिकायत है । इसके अतिरिक्त अभिरक्षा में यातना के प्रति साधारण दृष्टिकोण का महत्वपूर्ण प्रश्न है । ऐसी यातना के बारे में न्यायालय द्वारा नैमित्तिक रीति[4] से नहीं बरतना चाहिए । इस विषय पर एक उपयुक्त उपबंध जोड़ना उपयोगी प्रतीत होती है । हम सिफारिश करते हैं कि निम्न प्रकार उपबंध करने के लिए संहिता में एक उपबंध अंत:स्थापित करना चाहिए :—

"चाहे गिरफ्तार व्यक्ति, शरीर की इस धारा के अधीन परीक्षा के लिए प्रार्थना करता है या नहीं तो भी मजिस्ट्रेट ऐसे तथ्य अभिलेख में लाने के लिए, जिनसे यह दर्शित हो कि ऐसे व्यक्ति की बाबत, उसके गिरफ्तार किए जाने के पश्चात्, शरीर के विरुद्ध अपराध किया गया है, उस व्यक्ति को ऐसी परीक्षा के बारे में उसके अधिकार की जानकारी देगा ।"

2.9. दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 160.—अपराधों के अन्वेषण पर दंड प्रक्रिया संहिता में एक बृहत अध्याय है । इस अध्याय में **अन्य बातों के साथ** अन्वेषण में लगे पुलिस अधिकारियों को विभिन्न शक्तियां दी गई हैं । साधारणतया पुलिस किसी व्यक्ति को, जिसके बारे में यह विश्वास है कि वह मामले के तथ्यों से परिचित है, समन कर सकती है और ऐसे व्यक्ति को इस प्रयोजन के लिए पुलिस थाने में आने के लिए निदेश दिया जा सकता है । किन्तु 15 वर्ष से कम आयु के व्यक्तियों की दशा में और सभी स्त्रियों की दशा में भी दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 160(1) के परंतुक में विनिर्दिष्ट रूप से उपबंध किया गया है कि वे उक्त प्रयोजन के लिए पुलिस थाने में नहीं बुलाए जाएंगे और उनकी परीक्षा उनके निवास स्थान पर की जानी चाहिए । यह विशिष्ट रूप से एक स्वस्थ उपबंध है किन्तु दुर्भाग्यवश इसके अतिलंघन के लिए इस धारा में किसी विनिर्दिष्ट अनुशास्ति का उपबंध नहीं है । हम इस विषय पर बाद[5] में चर्चा करेंगे ।

2.10. दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 160(1) का परंतुक : निवास स्थान पर परीक्षा—इस समय धारा 160(1) का परंतुक निम्न प्रकार है :—

"परन्तु किसी पुरुष से जो पंद्रह वर्ष से कम आयु का है या किसी स्त्री से, ऐसे स्थान में जिसमें ऐसा पुरुष या स्त्री निवास करती है, भिन्न स्थान पर हाजिर होने की अपेक्षा नहीं की जाएगी ।"

चाहे इस परंतुक के पीछे आशय यह रहा हो कि संबंधित व्यक्तियों की परीक्षा उनके गृह में की जाए, इस संबंध में कुछ संदिग्धता उत्पन्न होती है क्योंकि उस परंतुक में उपयोग किया गया "स्थान" पद कुछ स्पष्ट नहीं है । संहिता की धारा 2 में यथा परिभाषित "स्थान" पद के अंतर्गत गृह, वन, तंबू, यान और जलयान भी है । यह परिभाषा समावेषक है । यह सुस्पष्ट रूप से दर्शित नहीं करती है कि धारा 160(1) के परंतुक के संदर्भ में "स्थान" शब्द से किसी अप्राप्तवय या स्त्री का वास्तविक निवास-स्थान अभिप्रेत है । यह संभव है कि इसके अर्थान्वयन से निवास-स्थान का परिक्षेत्र अभिप्रेत हो जिस पर संबंधित पुलिस अधिकारी की अधिकारिता है । ऐसे गलत अर्थान्वयन से बचना वांछनीय प्रतीत होता है ।

यह कथित किया जाता है कि विधि आयोग ने बलात्संग और सहबद्ध अपराधों[6] पर अपनी रिपोर्ट में सिफारिश की थी कि यह उपबंध किया जाना चाहिए कि पंद्रह वर्ष से कम आयु के किसी पुरुष या किसी स्त्री से उसके **निवास-स्थान** से भिन्न किसी स्थान में हाजिर होने की अपेक्षा नहीं की जाएगी । हमारा विचार है कि इस सिफारिश को भी, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 का उपयुक्त रूप से संशोधन करके कार्यान्वित करना चाहिए ।

2.11. दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 160 (1) : महिला सामाजिक कार्यकर्ताओं को सहयुक्त करना— ऊपर दिए गए संशोधनों के अतिरिक्त यह उपबंध करना उचित होगा कि जब पंद्रह वर्ष से कम आयु के किसी अल्पवय व्यक्ति या स्त्री की अन्वेषण के दौरान पुलिस द्वारा परीक्षा की जाती है तब ऐसे पुरूष या स्त्री के किसी नातेदार या मित्र या स्त्री और बालक कल्याण में हितबद्ध किसी मान्यताप्राप्त संगठन के किसी प्रतिनिधि को उपस्थित रहने की अनुज्ञा होनी चाहिए । इस विषय पर बलात्संग और सहबद्ध अपराधों पर अपनी रिपोर्ट में विधि आयोग द्वारा भी विचार किया गया था जिसने इस प्रयोजन[7] के लिए दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 160 (1) का संशोधन करने का पक्ष लिया था । हमारे विचार में ऐसा परिवर्तन विशिष्ट रूप से वांछनीय है और हम सिफारिश करते हैं कि निम्नलिखित प्रतिपादना दंड प्रक्रिया संहिता में, सम्मिलित करनी चाहिए :—

> "जहां अन्वेषण के दौरान पंद्रह वर्ष से कम आयु के किसी पुरुष या स्त्री का कथन किसी पुरुष पुलिस अधिकारी द्वारा या तो किसी अपराध की प्रथम इत्तिला या किसी अपराध के अन्वेषण के अनुक्रम में लेखबद्ध किया जाता है वहां ऐसे पुरुष या स्त्री के किसी नातेदार या मित्र को और स्त्री या बालक कल्याण में हितबद्ध ऐसे संगठन द्वारा, जो राज्य सरकार द्वारा राजपत्र में अधिसूचना द्वारा इस निमित्त मान्यताप्राप्त है, प्राधिकृत किसी व्यक्ति को भी उस सम्पूर्ण अवधि पर्यंत जिसके दौरान कथन लेखबद्ध किया जा रहा है, उपस्थित रहने की अनुज्ञा दी जाएगी ।"

2.12. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 160 का अतिक्रमण और भारतीय दंड संहिता की प्रस्तावित धारा 166क—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 160 (1) के परंतुक के अतिक्रमण के लिए शास्ति का उपबंध करने के प्रश्न की जांच बलात्संग और सहबद्ध अपराधों पर अपनी रिपोर्ट में भारत के विधि आयोग द्वारा की गई थी । आयोग ने यह नोट किया कि इस कानूनी आदेश के अतिक्रमण में किसी व्यक्ति का मात्र समन करना, अनुमानत: भारतीय दंड संहिता की धारा 341 के अधीन, जिसमें एक मास तक कारावास और पांच सौ रुपये के जुर्माने की अधिकतम शास्ति का उपबंध है, सदोष परिरोध के रूप में दंडनीय होगा । यह आयोग की राय में, पर्याप्त नहीं था । अधिसंभाव्यत: भारतीय दंड संहिता की धारा 166 के अधीन एक आरोप (किसी व्यक्ति को क्षति कारित करने के आशय से विधि के निदेश की लोक सेवक द्वारा अवज्ञा) लगाया जा सकता है । किन्तु आयोग की राय में ऐसे अतिक्रमण को अंतर्गत लाने के लिए एक अभिव्यक्त उपबंध रखना बेहतर होगा और यह उपबंध भारतीय दंड संहिता के "लोक सेवकों द्वारा या उनके विरुद्ध अपराध" से सम्बन्धित अध्याय में उपयुक्त रूप से रखा जा सकता है । इसलिए आयोग की सिफारिश थी कि दंड संहिता में धारा 166क निम्नलिखित रूप में अंत :स्थापित करनी चाहिए :—

> "166क. जो कोई, लोक सेवक होते हुए—
>
> (क) किसी अपराध या अन्य बात के अन्वेषण के प्रयोजन के लिए किसी व्यक्ति की किसी स्थान में हाजिरी अपेक्षित करने से उसे प्रतिषिद्ध करने वाली विधि के किसी निदेश की जानते हुए अवज्ञा करेगा, या
>
> (ख) उस रीति को विनियमित करने वाली विधि के किसी अन्य निदेश की, जिसमें वह ऐसा अन्वेषण संचालित करेगा, किसी व्यक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव डालने के लिए जानते हुए अवज्ञा करेगा,
>
> वह कारावास से, जिसकी अवधि एक वर्ष तक की हो सकेगी या जुर्माने से या दोनों से दंडित किया जाएगा ।"

यह भी सिफारिश की गई कि प्रस्तावित अपराध किसी मजिस्ट्रेट द्वारा संज्ञेय, जमानतीय और विचारणीय होना चाहिए । हमारा यह विचार है कि इस सिफारिश को अनाचार या उदासीनता के कार्यों के विरुद्ध जो स्त्रियों को दिक करने की स्थितियां उत्पन्न कर दें, निवारक उपाय के रूप में कार्यान्वित करना चाहिए ।

2.13. दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 416 : किसी गर्भवती स्त्री को मृत्यु दंड— दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 416 में उपबंध है कि यदि वह स्त्री, जिसे मृत्यु दंडादेश दिया गया है, गर्भवती पाई जाती है तो उच्च न्यायालय दंडादेश का निष्पादन मुल्तवी किए जाने के लिए आदेश देगा और, यदि ठीक समझे तो, दंडादेश का आजीवन कारावास के रूप में लघुकरण कर सकेगा । हमारा विचार है कि ऐसे मामलों में दंडादेश के लघुकरण को आज्ञापक बनाने का समय आ गया है और हम सिफारिश करते हैं कि धारा 416 का इस प्रकार संशोधन करना चाहिए । इस प्रयोजन के लिए, दंड प्रक्रिया संहिता विद्यमान धारा 416 के स्थान पर निम्नलिखित धारा रखनी चाहिए :—

> **"416. गर्भवती स्त्री को मृत्यु दंड**—यदि मृत्यु से दंडादिष्ट कोई स्त्री गर्भवती पाई जाती है तो उच्च न्यायालय दंडादेश का आजीवन कारावास के रूप में लघुकरण करेगा ।"

हमारा आशय यह है कि लघुकृत दंडादेश उचित मामलों और परिहार के अधीन होना चाहिए ।

2.14. स्त्री संस्थाओं में निरोध : दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 417क (प्रस्तावित)— गिरफ्तारी के पश्चात् किसी स्त्री के निरोध के सम्बन्ध में बात जिस पर विचार करना अपेक्षित है वह स्थान है जहां उसे निरुद्ध किया जाना है । इस प्रश्न की जांच बलात्संग और सहबद्ध अपराधों पर अपनी रिपोर्ट[10] में विधि आयोग द्वारा भी की गई थी । सिफारिश यह थी कि यदि उस परिक्षेत्र में ऐसे निरोध के लिए उपयुक्त व्यवस्थाएं नहीं हैं तो स्त्रियों को स्त्री और बालक (अनुज्ञापन) अधिनियम, 1956 के अधीन स्थापित और अनुरक्षित किसी संस्था में भेजा जाना चाहिए ।

हम सिफारिश करते हैं कि संहिता में उपयुक्त रीति से एक संशोधन इस प्रभाव की उपरिका जोड़ने के अधीन रहते हुए किया जाए कि जहां कहीं साध्य हो ऐसा करना चाहिए क्योंकि हो सकता है कि कुछ क्षेत्रों में ऐसी संस्थाएं विद्यमान न हों ।

2.15. दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 432—अब हम आजीवन कारावास के दंडादेश के प्रति विशेष निर्देश से कारावास की अवधि की चर्चा करते हैं । साधारणत: आजीवन कारावास विशिष्ट संख्या में वर्षों के लिए होती है और दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 में धारा 433क के अंत:स्थापन होने तक (1978 के अधिनियम सं० 45 द्वारा) मामला संहिता की धारा 432 के अधीन सरकार के विवेक में रहा । धारा 432 समुचित सरकार को अन्य बातों के साथ निलंबन या परिहार करने के लिए प्राधिकृत करती है । निस्संदेह परिहार का विधिक साधिकार[11] के रूप में दावा नहीं किया जा सकता । किन्तु व्यवहार में राज्य सरकार द्वारा दिए गए परिहारों का शुध्द प्रभाव ऐसा था कि आजीवन कारावास कम होकर लगभग 10 से 12 वर्ष का कारावास रह जाता था । स्थिति में सारवान् रूप से परिवर्तन हुआ जब 1978 में धारा 433 संहिता में आ गई ।

2.16. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 433क—धारा 432 के अतिरिक्त दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 433क में उपबंध है कि समुचित सरकार दंडादिष्ट व्यक्ति की सहमति के बिना कुछ दंडादेशों का लघुकरण कर सकती है । इस शक्ति के अंतर्गत है :—

> (क) मृत्यु दंडादेश का दंड संहिता द्वारा उपबंधित किसी अन्य दंड के रूप में लघुकरण, और साथ ही;
>
> (ख) आजीवन कारावास के किसी दंडादेश का 14 वर्ष से अनधिक अवधि के कारावास के रूप में या जुर्माने के रूप में लघुकरण । यहां भी कोई सिद्धदोष व्यक्ति 14 वर्ष के पश्चात् उन्मोचित किए जाने की मांग नहीं कर सकता जहां वह आजीवन कारावास के लिए दंडादिष्ट किया गया है, धारा 433क के अधीन एक विनिर्दिष्ट आदेश आवश्यक है ।[12]

किन्तु अब शक्ति अभिव्यक्त रूप से संहिता की धारा 433 क के अधीन कर दी गई है (1978 में अंत:-स्थापित) जो निम्न प्रकार है :—

"433क. धारा 432 में किसी बात के होते हुए भी, जहां किसी व्यक्ति को ऐसे अपराध के लिए, जिसके लिए मृत्यु दंड विधि द्वारा उपबंधित दंडों में से एक है आजीवन कारावास का दंडादेश दिया गया है या धारा 433 के अधीन किसी व्यक्ति को दिए गए मृत्यु दंडादेश का आजीवन कारावास के रूप में लघुकरण किया गया है वहां ऐसा व्यक्ति कारावास से तब तक नहीं छोड़ा जाएगा जब तक कि उसने चौदह वर्ष का कारावास पूरा न कर लिया हो।"

2.17. कैदियों की स्थिति— हम संहिता के इन उपबंधों के प्रति निर्देश स्त्री कैदियों से सम्बन्धित कुछ प्रश्नों पर चर्चा करने के लिए अपने को समर्थ बनाने के लिए कर रहे हैं। किसी स्त्री कैदी के मामले में जो आजीवन कारावास से दंडादिष्ट की गई है (और इसलिए दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के कड़े उपबंधों के अधीन की गई है) क्या यह उचित है कि विधि धारा 433क में आज्ञापक रूप से अधिकथित कम से कम 14 वर्ष का कारावास कैदी द्वारा भोगे जाने के लिए हठ करे ? धारा 433क में सर्वोपरि खंड यह स्पष्ट करता है कि दंडादेश का निलम्बन और परिहार करने की समुचित सरकार की शक्ति के होते हुए भी ऐसा न्यूनतम कारावास प्रवर्तन में रहता है। इस समय हमें इस धारा की संवैधानिक वैधता की चिन्ता नहीं है जो मान्य[13] ठहराई गई है। हमारी चिन्ता स्त्री कैदियों पर इस कड़े उपबंध के संभाव्य प्रभाव की बाबत है। हमें प्रतीत होता है कि अनेक ऐसे मामले होगें जिनमें स्त्री कैदियों को इस धारा का स्पष्ट रूप से लागू होना गंभीर कष्ट कारित करेगा — दृष्टांतस्वरूप जहां स्त्री के, जब वह जेल में है, पति की अचानक मृत्यु हो जाती है, या जहां उस स्त्री की किशोर पुत्री अब यौवनागम प्राप्त करने वाली है। विधि रिपोर्टों के अध्ययन से पता चलेगा कि अनेक मामलों[14] में न्यायालयों ने सरकार से यह सिफारिश करना उचित समझा है कि हत्या के लिए आजीवन कारावास के पारित दंडादेश के स्थान पर लघुतर दंडादेश प्रतिस्थापित किया जाए।

2.18. विचार के लिए विषय— विचार योग्य विषय यह है कि क्या स्त्रियों को धारा 433क द्वारा अधिरोपित वर्जन से छूट नहीं देनी चाहिए। हमारा विचार है कि ऐसा कदम न्याय के हितों में अपेक्षित है और सुरक्षा को किसी बड़े खतरे में डाले बिना सुरक्षित रूप से लिया जा सकता है। वर्जन के हटाने का यह अर्थ नहीं होगा कि आजीवन कारावास से दंडादिष्ट स्त्रियां 14 वर्ष या किसी अन्य अवधि की समाप्ति पर स्वतः छोड़ दी जाएंगी। इसका अर्थ केवल यह होगा कि समुचित सरकार की दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 432 या 433 के अधीन गुणागुण के आधार पर परिहार प्रदान करने की शक्ति प्रयोक्तव्य हो जाएगी। तब समुचित सरकार प्रत्येक मामले की परिस्थितियों को देखने के लिए स्वतंत्र होगी। हम देखते हैं कि धारा 433क बोर्स्टल स्कूल अधिनियम[15] के अधीन सिद्धदोष ठहराए गए व्यक्तियों को लागू न होने वाली अभिनिर्धारित की गई है। हमारे विचार में स्त्रियों की बाबत भी वही दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिए विशेष रूप से इस कारण कि स्त्रियों के लिए लम्बे समय तक कारावास से न केवल उनके मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ेगा बल्कि कुटुम्ब के अन्य सदस्यों के कल्याण पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।

हम यह वर्णन करते हैं कि **माडूराम के मामले**[16] में उच्चतम न्यायालय ने धारा 433क में प्रतिबिंबित कड़े दृष्टिकोण की बाबत कुछ व्याकुलता अभिव्यक्त की थी।

2.19. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 433क के बारे में सिफारिशें—(दंड प्रक्रिया संहिता की प्रस्तावित धारा 450च) हमारी सिफारिश यह होगी कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के विस्तार से वह मामला उपवर्जित कर दिया जाए जहां वह व्यक्ति जिस पर आजीवन कारावास का दंड अधिरोपित किया गया है या जिसकी बाबत मृत्यु दंड का आजीवन कारावास के रूप में लघुकरण किया गया है, कोई स्त्री है।

2.20. आजीवन कारावास में कमी :—दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 432 : इलाहाबाद से एक मामला— भले ही वर्तमान रिपोर्ट सरकार की दंड का परिहार करने की शक्तियों से सीधे सम्बन्धित नहीं इलाहाबाद न्यायालय के हाल ही के निर्णय के तथ्यों को नोट करना उचित होगा क्योंकि वे तथ्य ऐसा दृष्टांत प्रस्तुत करते हैं कि किस प्रकार स्थितियां पैदा हो जाएं जब आजीवन कारावास का दंड (जो हत्या के लिए न्यूनतम कठोर दंड है) भी किसी विशेष मामले में तथ्यों के कारण अति कठोर साबित हो। इलाहाबाद वाले मामले[17] में एक माता ने अपने शिशु पुत्र की हत्या कर दी थी और फिर स्वयं उसने आत्महत्या करने का प्रयत्न किया। अपराध के समय वह केवल 17 वर्ष की थी। हत्या के लिए कोई दृश्यमान कारण नहीं था जो

क्रोध में की गई थी। उसके कार्य के परिणामस्वरूप उसने न केवल अपना पुत्र खोया बल्कि अपने पति की सहानुभूति भी खो दी जिसने इस शोकांत दुर्घटना के पश्चात् उसे अपने घर में रखने से इंकार कर दिया। उच्च न्यायालय ने, उस स्त्री को आजीवन कारावास का दंड अधिनिर्णित करते हुए इस प्रभाव का संप्रेक्षण किया कि मामला ऐसा है जिसमें कारावास के दंड के एक भाग को राज्य सरकार द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 432 के अधीन कम कर देना चाहिए। यह नमूने का केवल एक मामला है जिसमें इस प्रतिपादना का दृष्टांत है कि विशेष परिस्थितियों में आजीवन कारावास भी हत्या के लिए अति कठोर दंड साबित हो सकता है। यदि ऐसा है तो संहिता की धारा 433क के पुनरीक्षण की आवश्यकता है[18]।

2.21. स्त्रियों की जमानत मंजूर करना: दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 437—जमानत सम्बन्धी कुछ प्रश्न विचार के लिए सामने आते हैं। इस समय दंड प्रक्रिया संहिता जमानत के प्रश्न पर विचार करते हुए इस तथ्य को गणना में लेती है कि स्त्रियों की ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। न्यायालय को यह निदेश देते हुए कि ऐसे व्यक्ति को जमानत पर वहां न छोड़े जहां वह मृत्यु से या आजीवन कारावास से दंडनीय अपराध के लिए अभियुक्त है, संहिता (धारा 437 (1) में) यह उपबंध करने की सावधानी बरतती है कि यह प्रतिषेध वहां लागू नहीं होगा जहां अभियुक्त स्त्री है (कुछ अन्य अपवाद हैं जो वर्तमान प्रयोजन के लिए तात्विक नहीं हैं)[19]। साधारणतया न्यायालयों ने इस उपबंध का सम्यक् ध्यान रखा है और स्त्रियों को मामूली तौर पर जमानत नामंजूर नहीं की जाती है चाहे किया गया अपराध गंभीर हो। फिर भी इस तथ्य को कि अभियुक्त एक स्त्री है न्यायालय के कर्तव्य के रूप में बल देने वाले अधिक विनिर्दिष्ट उपबंध के अभाव को वर्तमान विधि में कमी के रूप में समझा जा सकता है। हमारी राय है कि इस पहलू पर बल देने का समय आ गया है और इस प्रयोजन के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की सुसंगत धारा का संशोधन करना वांछनीय है।

2.22. वर्तमान धारा—इस समय दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 437(1) निम्न प्रकार है :

"437—(1) जब कोई व्यक्ति, जिस पर अजमानतीय अपराध का अभियोग है या जिस पर संदेह है कि उसने अजमानतीय अपराध किया है, पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी द्वारा वारंट के बिना गिरफ्तार या निरुद्ध किया जाता है या उच्च न्यायालय अथवा सेशन न्यायालय से भिन्न न्यायालय के समक्ष हाजिर होता है या लाया जाता है तब वह जमानत पर छोड़ा जा सकता है, किन्तु—

(i) यदि यह विश्वास करने के लिए उचित आधार प्रतीत होते हैं कि ऐसा व्यक्ति मृत्यु या आजीवन कारावास से दंडनीय अपराध का दोषी है तो वह इस प्रकार नहीं छोड़ा जाएगा;

(ii) यदि ऐसा अपराध कोई संज्ञेय अपराध है और ऐसा व्यक्ति मृत्यु, आजीवन कारावास या सात वर्ष या उससे अधिक के कारावास से दंडनीय किसी अपराध के लिए पहले दोषसिद्ध किया गया है, या वह किसी अजमानतीय और संज्ञेय अपराध के लिए दो या अधिक अवसरों पर पहले दोषसिद्ध किया गया है तो वह इस प्रकार नहीं छोड़ा जाएगा :

परन्तु न्यायालय यह निदेश दे सकेगा कि खंड (1) या खंड (2) में निर्दिष्ट व्यक्ति जमानत पर छोड़ दिया जाए यदि ऐसा व्यक्ति सोलह वर्ष से कम आयु का है या कोई स्त्री या कोई रोगी या शिथिलांग व्यक्ति है :

परन्तु यह और कि न्यायालय यह भी निदेश दे सकेगा कि खंड (1) में निर्दिष्ट व्यक्ति जमानत पर छोड़ दिया जाए, यदि उसका समाधान हो जाता है कि किसी अन्य विशेष कारण से ऐसा करना न्यायोचित तथा ठीक है:

परन्तु यह और भी कि केवल यह बात कि अभियुक्त की आवश्यकता, अन्वेषण में साक्षियों द्वारा पहचाने जाने के लिए हो सकती है, जमानत मंजूर करने से इंकार करने के लिए पर्याप्त आधार नहीं

होगी, यदि वह अन्यथा जमानत पर छोड़ दिए जाने के लिए हकदार है और वह वचन देता है कि वह ऐसे निदेशों का, जो न्यायालय द्वारा दिए जाएं, अनुपालन करेगा ।"

2.23. सिफारिश—हमारी सिफारिश है कि संहिता की धारा 437 (1) के प्रथम परंतुक का निम्नलिखित रूप में पुनरीक्षण किया जाए :

> "परन्तु यदि खंड (1) में निर्दिष्ट व्यक्ति सोलह वर्ष से कम आयु का है या कोई स्त्री या कोई रोगी या शिथिलांग व्यक्ति है तो न्यायालय निदेश देगा कि ऐसा व्यक्ति जमानत पर छोड़ दिया जाए, **जब तक कि न्यायालय, लेखबद्ध किए जाने वाले कारणों से ऐसे व्यक्ति को जमानत पर न छोड़ना उचित समझता है ।"**

2.24 गर्भवती स्त्री : कारावास के दंडादेश का निलंबन—(दंड प्रक्रिया संहिता की प्रस्तावित धारा 450ख) जबकि यह सुनिश्चित करने के लिए सभी आवश्यक कदम उठाने चाहिएं कि अभिरक्षा में स्त्रियों की उचित देखभाल की जाती है, गर्भवती स्त्रियों के सम्बन्ध में कुछ संरक्षणात्मक उपायों के बारे में विचार करना भी वांछनीय प्रतीत होता है । हमारा यह विचार है कि दोषसिद्ध करने वाले न्यायालय को कारावास के किसी दंडादेश के, जो किसी गर्भवती स्त्री के विरुद्ध पारित किया गया हो, निष्पादन का निलंबन करने की शक्ति होनी चहिए । इस समय देश की दांडिक विधि न्यायालय को ऐसा कोई विवेक नहीं देती है, और हम इसे प्रक्रिया सम्बन्धी विधि में एक कमी समझते हैं । किसी गर्भवती स्त्री की असाधारण आवश्यकताओं को विचारण न्यायालय द्वारा विचार में लिया जाना चाहिए, और विधि में कारावास के दंडादेश के (चाहे वह आजीवन हो या किसी विनिर्दिष्ट अवधि के लिए हो) निष्पादन का निलंबन करने का विवेक न्यायालय में निहित करने वाला एक उपबंध कुछ रक्षोपायों के अधीन रहते हुए होना चाहिए जहां दंडादिष्ट व्यक्ति कोई गर्भवती स्त्री है ।

संक्षेप में हमारा प्रस्ताव है कि आजीवन कारावास या किसी विनिर्दिष्ट अवधि के लिए कारावास का दंडादेश पारित करते समय न्यायालय को, यदि दंडादिष्ट स्त्री गर्भवती है, कुछ बातों का ध्यान रखते हुए दंडादेश के निष्पादन का निलंबन करने का निदेश देने की शक्ति होनी चाहिए । यह निलंबन तब तक प्रवर्तन में रहेगा जब गर्भावस्था समाप्त हो जाती है या ऐसे समय तक जो न्यायालय विनिर्दिष्ट करे । ऐसी अवधि के दौरान दंडादिष्ट स्त्री से एक बंधपत्र के अधीन परिशांति कायम रखने और सदाचारी होने और (यदि न्यायालय ऐसा निदेश दे तो) ऐसी शर्तों का अनुपालन करने की, जो विनिर्दिष्ट की जाएं, अपेक्षा की जाएगी । हम, स्त्री को अभ्यर्पण करने के लिए कहने या विवश करने के लिए अपनाई जाने वाली प्रक्रिया के ब्यौरों के बारे में भी उपबंध बना रहे हैं । दंडादेश के निलंबन की अवधि का परिणाम न्यायालय द्वारा अधिरोपित दंडादेश में कटौती नहीं होगा ।

2.25. महिला कैदियों से बर्ताव—उन संशोधनों के अतिरिक्त जिनकी हमने गिरफ्तारी, अन्वेषण, जांच और विचारण के प्रक्रम पर अभिरक्षा में स्त्रियों से बर्ताव करने में अपनाई जाने वाली प्रक्रिया के सम्बन्ध में अभी तक सिफारिश की है हमारी राय में यह भी आवश्यक है कि कारावास का दंडादेश (जहां ऐसा दंड न्यायालय द्वारा किसी स्त्री पर अधिरोपित किया गया है) उचित भावना से कार्यान्वित किया जाए । निस्संदेह कारावास उससे दंडादिष्ट व्यक्ति की स्वतन्त्रता पर निर्बंधन अधिरोपित करता है किन्तु यह कारागार में किसी व्यक्ति के साथ क्रूरता, दिक करने, शोषण या अन्य बुरा बर्ताव की अनुज्ञा नहीं देता है न ही यह कैदी के प्रति आलस्य या उदासीनता के रुख की अनुज्ञा देता है ।

स्वतन्त्रता पर निर्बंधन के सम्बन्ध में भी कारावास का कोई दंडादेश कैदी के असम्यक्, अप्रायिक, अत्यधिक या अनुचित परिरोध को न्यायोचित नहीं ठहराता है । यह प्रतिपादना कथित करने में हम उस बात का कथन कर रहे होंगे जो स्पष्ट या सुविदित है किन्तु ऐसे अवसर होंगे जब वह बात भी जो सुविदित है उसे एकरूपता और निश्चितता के हित में और किसी विशेष विषय पर विधि को व्यापक बनाने के लिए कानूनी रूप देना पड़ सकता है ।

2.26. महिला कैदियों से सम्बन्धित विनिर्दिष्ट प्रस्ताव—उच्च न्यायालय को शक्ति देना—पूर्वोक्त कोण से मामले को देखते हुए हम महिला कैदियों के सम्बन्ध में कुछ विनिर्दिष्ट उपबंधों के दंड प्रक्रिया संहिता में अंत:स्थापन का प्रस्ताव करते हैं । हमारी स्कीम में अनुध्यात है कि यह सुनिश्चित करने के लिए उच्च न्यायालय में यह शक्ति निहित की जाए कि इस प्रकार अंत:स्थापित किए जाने वाले रक्षोपायों का अनुपालन किया जाता है और हम इस उपबंध को प्रधान उपबंध के रूप में समझते हैं जो उन सभी शेष रक्षोपायों के कार्यकरण को मार्गदर्शित और नियंत्रित करेगा जिनकी हम इस निमित्त सिफारिश करेंगे ।

तदनुसार इस सम्बन्ध में हमारी पहली सिफारिश है कि उच्च न्यायालय के प्रशासनिक पक्ष में सेशन न्यायाधिशों को अपना यह समाधान करने के लिए कि महिला कैदियों का विभिन्न उपबंधों के अनुसार जिनकी हम सिफारिश करने जा रहे हैं, संरक्षण और उचित रूप से देखभाल की जाती है, निदेश देने की शक्ति निहित की जानी चाहिए । और उच्च न्यायालय को आवश्यक कार्रवाई करने के लिए (उन उपबंधों का अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए) राज्य सरकार से समावेदन करने के लिए ऐसे उपाय करने की, जो वांछनीय हो, शक्ति होनी चाहिए ।

2.27. चिकित्सीय परीक्षा—जहां तक विनिर्दिष्ट रक्षोपायों का सम्बन्ध है हम प्रस्ताव करते हैं कि जेल में प्रविष्ट होने पर किसी महिला कैदी की चिकित्सीय परीक्षा किसी महिला चिकित्सा अधिकारी द्वारा की जानी चाहिए और उसे किसी महिला घेरे में ऐसी अवधि के लिए, जो चिकित्सा अधिकारी की राय में आवश्यक हो, पृथक् रखा जाना चाहिए । महिला कैदियों की चिकित्सीय परीक्षा किसी विनिर्दिष्ट अवधि के लिए छोड़े जाने के पश्चात जेल में पुन: प्रवेश पर भी की जानी चाहिए ।

जबकि यह उपबंध प्रत्येक महिला कैदी को लागू होगा कुछ विनिर्दिष्ट उपबंधों की किसी महिला कैदी की, जो गर्भवती है, दशा में आवश्यकता होनी चाहिए । इस सम्बन्ध में हमारे प्रस्ताव निम्न रूप में हैं :—

(1) यदि मारसाधक अधिकारी या चिकित्सा अधिकारी को संदेह होता है कि कोई महिला कैदी गर्भवती है तो महिला कैदी को विस्तृत परीक्षा और रिपोर्ट के लिए जिला अस्पताल में भेजा जाएगा ।

(2) जिला सरकारी अस्पताल की महिला चिकित्सा अधिकारी, जिसके पास महिला कैदी भेजी गई है उसके स्वास्थ्य, गर्भावस्था, गर्भावस्था की अवधि और प्रसव की अधिसंभाव्य तारीख तथा विहित किए जाने वाले विशेष आहार और अपनाए जाने वाले अन्य उपायों को प्रमाणित करेगी ।

(3) उसके पश्चात् महिला कैदी की स्त्री रोग परीक्षा, जिला सरकारी अस्पताल में किसी महिला चिकित्सा अधिकारी द्वारा की जाएगी और महिला कैदी को चिकित्सीय सलाह के अनुसार प्रसवार्थ और प्रसव पूर्व उचित देखरेख की जाएगी ।

(4) उन्नत गर्भावस्था के मामलों में महिला कैदी सरकारी अस्पताल के महिला वार्ड में भेज दी जाएगी ।

(5) ऐसी महिला कैदी, शिशु के जन्म के पश्चात् पन्द्रह दिन से अन्यून या ऐसी दीर्घतर अवधि के लिए जिसकी स्त्री रोग विशेषज्ञ द्वारा सलाह दी जाए, सरकारी अस्पताल के स्त्री वार्ड में रखी जाएगी ।

2.28. महिला कैदियों का अभिवहन—महिला कैदियों के अभिवहन के सम्बन्ध में कुछ रक्षोपाय वांछनीय प्रतीत होते हैं । ऐसा अभिवहन—

(क) एक जेल से दूसरी में हो सकेगा, या

(ख) न्यायालय में ले जाने के लिए हो सकेगा, या

(ग) अन्वेषण के लिए हो सकेगा ।

इस विषय पर हमारी सिफारिशें निम्न प्रकार हैं:

3—5 Min. of L. & J./ND/90

(1) किसी महिला कैदी को ऐसे अभिवहन के दौरान हथकड़ी नहीं लगाई जाएगी और उससे बेड़ियां या क्रास वार पहनने की अपेक्षा नहीं की जाएगी ।

(2) किसी महिला कैदी को मैट्रन या महिला वार्डन के पहरे में ले जाया जाएगा यदि उससे महिला घेरे को छोडने की अपेक्षा की जाती है और ऐसी मैट्रन या महिला वार्डन कैदी के साथ, घेरे में उसकी वापसी तक या जेल से उसके छोड़े जाने तक, रहेगी ।

(3) महिला कैदी के किसी महिला नातेदार को ऊपर वर्णित प्रकृति के अभिवहन के दौरान महिला कैदी के साथ जाने की अनुज्ञा दी जाएगी ।

2.29. निरोध स्थान—महिला कैदियों से सम्बन्धीत उपबंधों के भागरूप स्त्रियों के निरोध स्थान के सम्बन्ध में नए उपबंध को सम्मिलित करना सुविधाजनक होगा जिसके प्रति हमने पहले ही निर्देश किया है । उसकी बलात्संग आदि पर विधि आयोग की रिपोर्ट में सिफारिश की गई थी जिसको हमारे विचार में कार्यान्वित करने की आवश्यकता है ।

प्रस्ताव का सार यह है कि जहां परिक्षेत्र में किसी स्त्री के निरोध के लिए उपयुक्त प्रबन्ध नहीं है वहां स्त्री को स्त्री और बालक संस्था (अनुज्ञापन) अधिनियम, 1956 के अधीन अनुरक्षित किसी संस्था या राज्य सरकार द्वारा इस प्रयोजन के लिए मान्यताप्राप्त किसी संस्था में भेज दिया जाएगा ।

2.30. जेलों का निरीक्षण—यह प्रसामान्य अनुभव है कि केवल विधायी उपबंधों के कार्यान्वयन न किए जाने का खतरा रहता है जब तक कि उनके प्रवर्तन पर निगरानी करने के लिए उचित तंत्र तैयार नहीं किया जाता है । ऐसे तंत्र के भागरूप, हम, किसी न्यायिक अधिकारी, अधिमानत: किसी महिला अधिकारी द्वारा (जहां वह उपलब्ध है) जो सेशन न्यायाधीश द्वारा नाम-निर्दिष्ट किया जाएगा या जहां कोई महिला न्यायिक अधिकारी उपलब्ध नहीं है वहां किसी पुरुष न्यायिक अधिकारी द्वारा, जिसके साथ एक महिला सामाजिक कार्यकर्ता होगी, जेलों के निरीक्षण की सिफारिश करते हैं । सेशन न्यायालय के मुख्यालय से भिन्न स्थानों पर वे निरीक्षण के लिए प्रत्येक दो मास में कम से कम एक बार जेलों का आकस्मिक परिदर्शन :

(1) गिरफ्तार की गई महिलाओं को अपनी शिकायतें संसूचित करने के लिए अवसर देने,

(2) जेलों की दशाएं अभिनिश्चित करने और यह सत्यापित करने, कि क्या अपेक्षित सुविधाएं दी जा रही हैं और विधि के उपबंधों (महिला कैदी के सम्बन्ध में)का अनुपालन किया जा रहा है,

(3) महिला कैदियों की बाबत जेलों के भार साधक अधिकारियों द्वारा की गई गलतियाँ, यदि कोई हों, सेशन न्यायाधिश की जानकारी में लाने की दृष्टि से करेंगें,

सेशन न्यायालय के मुख्यालय पर सेशन न्यायाधीश जेलों के वैसे निरीक्षण करेगा ।

सेशन न्यायाधीश निरीक्षण रिपोर्टों की प्रतियां पुलिस आयुक्तों (या अन्य तत्स्थानी अधिकारी), मठानिरीक्षक (कारागार) और राज्य सरकार को भेजेगा और ऐसी सिफारिशें कर सकेगा जो मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में अपेक्षित हों ।

यदि प्राधिकारी सेशन न्यायाधीश की सिफारिशों का कार्यान्वयन करने में असफल रहते है तो मामला उच्च न्यायालय की जानकारी में लाया जाएगा ।

2.31. जेल परिदर्शक—न्यायिक अधिकारियों द्वारा पूर्वोक्त आकस्मिक परिदर्शनों के अतिरिक्त यह वांछनीय है कि सरकार द्वारा नियुक्त परिदर्शक जेलों का कथित अंतरालों पर परिदर्शन भी करेंगे । इस सम्बन्ध में हमारी सिफारिशें निम्न प्रकार हैं:

(1) (यथास्थिति) केन्द्रीय सरकार (या राज्य सरकारों) को इस प्रयोजन के लिए प्रत्येक जिला या जेल के लिए कम से कम तीन परिदर्शक नियुक्त करने चाहिएं । इनमें से कम से कम एक-एक

चिकित्सा अधिकारी और दो सामाजिक कार्यकर्ता होंगे जिनमें से जहां कहीं साध्य हो कम से कम एक महिला होगी ।

(2) दो से अन्यून परिदर्शकों को (जिनमें से कम से कम एक महिला सामाजिक कार्यकर्ता होगी) प्रत्येक छह मास में एक बार उस जिले में, जिसकी बाबत वे नियुक्त किए गए हैं, जेल के प्रत्येक भाग का संयुक्त निरीक्षण करना चाहिए । उनका कृत्य उसमें विद्यमान दशाएँ अभिनिश्चित करना और यह जांच करना होगा कि क्या अपेक्षित सुविधाएँ दी जा रही हैं और विधि में उपबंधों का अनुपालन किया जा रहा है तथा स्त्री कैदियों के सम्बन्ध में सक्षम न्यायालय द्वारा दिए गए निदेशों का कार्यान्वयन किया जा रहा है ।

(3) परिदर्शक निरीक्षण रिपोर्ट आगे कार्रवाई के लिए सेशन न्यायाधीश को भेजेंगे ।

2.32. महिला कैदियों के सम्बन्ध में उपबंधों का विस्तार : परिभाषा—ये उपबंध प्रत्येक "महिला कैदी" को लागू होने के लिए अभिप्रेत हैं । यह वह पद है जिसे इस प्रकार परिभाषित करने का प्रस्ताव है कि उससे कोई ऐसी स्त्री अभिप्रेत है जिसे चाहे अन्वेषण, जांच या विचारण या दोषसिद्धि के पश्चात् या निवारक निरोध का उपबंध करने वाली किसी विधि के अधीन जेल में निरुद्ध किया गया है । इस प्रयोजन के लिए "जेल" के अन्तर्गत कोई हवालात, कोई कारागार और कोई ऐसा स्थान होगा जहां व्यक्ति निवारक निरोध का उपबंध करने वाली किसी विधि के अधीन निरोध में रखे जाते हैं ।

2.33. कैदियों के सम्बन्ध में न्यायालयों की भूमिका—इस बारे में कुछ संप्रेषण करना उपयुक्त होगा कि हमारे प्रस्तावों में कारावास में स्त्रियों से संबंधित कुछ महत्वपूर्ण कृत्य सेशन न्यायाधिशों और उच्च न्यायालयों में क्यों निहित किए गए हैं । किसी सभ्य समाज मे न्याय प्रशासन (यहां हमारा संबंध मुख्य रूप से दांडिक न्याय से है) ऐसी प्रक्रिया है जो दांडिक अभियोजन से आरंभ या समाप्त नहीं होती है । इसकी जड़े कहीं पहले हैं और इसके परिणाम न्यायालय सदन से बहुत परे है । दांडिक न्याय पद्धति, यदि इसे उचित रूप से देखा जाए, किसी दांडिक कानून के बनाए जाने से, चाहे वह साधारण दांडिक विधि को दर्शित करने वाली दंड विधि या सामाजिक विनियमन के इस या उस भाग से सम्बन्धित कोई विशेष या स्थानीय विधि हो । इस प्रकार अधिनियमित विधायन का प्रवर्तन पुलिस और अन्य विधि प्रवर्तक अभिकरणों द्वारा किया जाता है जिन्हें दांडिक कानून की सहायता में किन्तु विधि द्वारा अधिकथित प्रक्रिया के अनुरूप कार्य करना चाहिए । यह किसी दांडिक कानून का अतिक्रमण **प्रथम दृष्ट्या** पाया जाता है तो मामला न्यायालय को अग्रसर होता है, और न्यायपालिका के सीधे संज्ञान के भीतर आता है । दंडादेश देना और दंडादेश के विकल्प विचारण के अंत पर ही दिखाई देते हैं । दंडादेश देने के पश्चात् जो कुछ होता है दंड़ विधि के पीछे उद्देश्य को वास्तव में कार्यान्वित करता है चाहे यह विचारण से कालानुक्रम रूप से दूर और उस दांडिक कानून से, जिसके अधीन दंडादेश सुनाया जाता है कहीं अधिक दूर है । यह इसलिए है क्योंकि न्यायालय ने कोई दंडादेश पारित किया है या किसी विशेष अपराधी के लिए किसी अन्य अनुकल्प का आदेश किया है कि सुधारों का उपकरण प्रवर्तन में आता है । अपनी ओर से न्यायालय, दंड विधि को लागू करके और उसका निर्वचन करके न्याय प्रशासन करता है । यह सब एक एकीकृत प्रक्रिया है चाहे उस कड़ी का जो सम्पूर्ण प्रक्रिया में विद्यमान है उन व्यक्तियों को मान नहीं है जो उसका कार्यकरण केवल एक ही स्तर पर देखते है ।

यह वर्णन करना भी आवश्यक है कि हाल के वर्षों में रिट अधिकारिता का प्रयोग करने वाले न्यायालय अधिकतर इस बात से संबद्ध हो जाते हैं जिसे कभी कभी "कारावास न्याय " कहा जाता है । वे इस अधिकारिता का प्रयोग प्राय: मूल अधिकारों का प्रवर्तन करने में करते हैं जो संविधान के अनुच्छेद 21 द्वारा प्रत्याभूत किया गया अतिमहत्वपूर्ण अधिकार है । यह अनुच्छेद प्रत्येक व्यक्ति को प्राण और दैहिक स्वतंत्रता का जिससे उस व्यक्ति को "विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही" वंचित किया जाना चाहिए अन्यथा नहीं, अधिकार प्रत्याभूत करता है । इस अनुच्छेद की विवक्षाओं को स्पष्ट करते हुए और "प्रक्रिया" की, जिसका पालन किसी व्यक्ति को दैहिक स्वतंत्रता से वंचित करने से पूर्व किया जाना चाहिए, क्वालिटी की व्याख्या करते हुए भारत में उच्चतर न्यायपालिका ने भिन्न रक्षोपायों का, जिनका अनुपालन किया जाना चाहिए, वर्णन करने की जिम्मेदारी का निर्वहन किया है । इस विषय पर बहुत से न्यायिक विनिश्चय कैदियों से संबंधित हैं । इस प्रकार न्यायालयों ने जो प्रक्रिया के मामालों में कार्यवाही करने के लिए उत्कृष्ट रूप से

अर्हित हैं विधि प्रवर्तन पदधारियों के लिए और उनके लिए भी जो कारागारों से संबद्ध हैं कैदियों के साथ बर्ताव और संसक्त मामलों की बाबत मार्गदर्शन किए हैं । इससे न केवल संवैधानिक आदेश का कार्यान्वयन होता है जो स्पष्ट है वरन् यह प्रक्रिया के सूक्ष्म अंतरों को स्पष्ट करता है—यह ऐसा पहलू है जिसका वर्णन करना आवश्यक है । इस प्रकार प्रक्रिया और कारागारों के बीच संबंध न्यायिक विनिश्चयों द्वारा अधिक दृढ़ किया जाता है । इस क्षेत्र में कुछ महत्वपूर्ण विनिश्चिय **उपाबंध 2** में सूचीबद्ध किए गए हैं । इन निर्णयों से दर्शित होगा कि इस क्षेत्र में गहन और व्यापक बातें हुई हैं ।

हम विश्वास करते हैं कि स्त्री कैदियों के बारे में हमने जो प्रस्ताव इस रिपोर्ट में किए हैं जिनमें प्रारंभिक जिम्मेदारी न्यायपालिका के कंधो पर डाली गई है इस विषय पर न्यायिक निर्णय में जो "विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया" की संवैधानिक अपेक्षा के प्रकाश में कैदियों के साथ किए जाने वाले बर्ताव के सम्बन्ध में हैं और न्यायालयों तथा कारागारों के बीच आवश्यक संबंध को दर्शित करते हैं, प्रकट दृष्टिकोण को अग्रसर करने और उसकी वृद्धि करने वाले समझे जाएंगें ।

अध्याय 3

भारतीय दंड संहिता : अभिरक्षा में स्त्रियों का लैंगिक दुरुपयोग

3.1. लैंगिक दुरुपयोग और भारतीय दंड संहिता—अब हम भारतीय दंड संहिता के उपबंधों की चर्चा करते हैं जिसमें भारत की साधारण मुख्य दांडिक विधि अंतर्विष्ट है । यह वर्णित करना निरर्थक है कि मानव शरीर के विरुद्ध अपराधों के बारे में इसके अधिकतम उपबंध उस विस्तार तक जहां तक इन उपबंधों का उपभोग अभिरक्षा में व्यक्तियों द्वारा किया जा सकता है, लिंग का ध्यान किए बिना, सभी पीड़ित व्यक्तियों को लागू हैं । किन्तु स्त्रियों के लैंगिक दुरुपयोग का संहिता की कई धाराओं में विनिर्दिष्ट रूप से ध्यान रखा गया है । इस संदर्भ में जिन धाराओं का बार-बार आश्रय लिया जाता है वे धारा 354 (स्त्रियों पर आशिष्ट हमला), धारा 375-376 (बलात्संग) और धारा 376ख 376ग, 376घ हैं । इनमें से कुछ के प्रति इस अध्याय में निर्देश किया जाएगा ।

3.2. अभिरक्षा में बलात्संग—कोई व्यक्ति आरम्भ में ही स्त्रियों का दिक किया जाना, शोषण और लैंगिक दुरुपयोग निवारित करने के लिये विधि द्वारा उपबंधित विशेष रक्षोपाय जान सकता है । मुख्य विधि के सम्बन्ध में भारतीय दंड संहिता के उपबंधों में बलात्संग और सहबद्ध अपराधों के सम्बन्ध में किए गए दो परिवर्तन इस प्रक्रम पर नोट किए जाने चाहिए । दंड विधि संशोधन अधिनियम, 1983 (1983 का 43) में अभिरक्षा में बलात्संग पर ध्यान केन्द्रित करते हुए ऐसे बलात्संग के लिए दंड को प्रथमत: अधिक कड़ा किया है । इस प्रयोजन के लिए संहिता की धारा 376 (2) का जिस प्रकार वह 1983 में अंत:स्थापित की गई थी कुछ परिस्थितियों में किसी पुलिस अधिकारी द्वारा बलात्संग से विनिर्दिष्ट रूप से सम्बन्धित है, (जिसके अंतर्गत उसकी अभिरक्षा में किसी स्त्री के साथ बलात्संग है) किसी लोक सेवक द्वारा ऐसे सेवक के रूप में अपनी अभिरक्षा में किसी स्त्री के साथ किया गया बलात्संग, किसी व्यक्ति द्वारा बलात्संग जो किसी जेल, प्रतिप्रेषण गृह या अभिरक्षा के अन्य स्थान के या स्त्रियों या बालकों की किसी संस्था के प्रबन्ध या कर्मचारीवृंद में है, जब बलात्संग ऐसी जेल आदि के किसी निवासी आदि की बाबत है, और किसी व्यक्ति द्वारा बलात्संग जो किसी अस्पताल के प्रबंध या कर्मचारीवृंद में है जब बलात्संग उस अस्पताल में किसी स्त्री के साथ किया जाता है । अभिरक्षा में ऐसे बलात्संग के लिए धारा 376 (2) में अधिकथित न्यूनतम दंड दस वर्ष तक का कठोर कारावास है तो बलात्संग के किसी साधारण मामले के लिए विहित सात वर्ष के न्यूनतम कारावास से अधिक है । निस्संदेह दोनों मामलों में कारावास आजीवन हो सकता है ।

विधिक रूप से विहित न्यूनतम दंड पर्याप्त और विशेष कारणों से, जो लेखबद्ध किए जाएँगें, शिथिल किया जा सकता है । संहिता में यथापरिभाषित "अस्पताल" के अंतर्गत **अन्य बातों के साथ** ऐसी कोई संस्था है जो व्यक्तियों को या चिकित्सीय ध्यान या पुनर्वास की अपेक्षा रखनेवाले व्यक्तियों को या चिकित्सीय ध्यान या पुनर्वास की अपेक्षा रखने वाले व्यक्तियों को ग्रहण करने और उनका उपचार करने के लिए है ।

3.3. अभिरक्षा में लैंगिक दुरुपयोग—1983 में दंड संहिता मे किया गया दूसरा महत्वपूर्ण संशोधन (जहां तक वह वर्तमान प्रयोजन के लिए तात्विक है बलात्संग की कोटी में न आने वाले अभिरक्षा में लैंगिक दुरुपयोग के संबंध में धारा 376ख. 376ग और 376घ का अंत:स्थापन था । ये धाराएँ (धारा 376ग और 376घ में दी गई, कुछ परिभाषाओं का लोप करते हुए) नीचे उत्कथित की गई है :—

> **"375ख. लोकसेवक द्वारा अपनी अभिरक्षा में की किसी स्त्री के साथ संभोग**—जो कोई, लोक सेवक होते हुए, अपनी शासकीय स्थिति का लाभ उठाकर किसी स्त्री को जो ऐसे लोक सेवक के रूप में उसकी अभिरक्षा में हैं या उसके अधीनस्थ किसी लोक सेवक की अभिरक्षा में है, अपने साथ मैथुन करने के लिए उत्प्रेरित या विलुब्ध करेगा, जो मैथुन बलात्संग की कोटि में नहीं आता

है, वह दोनों में से किसी भांति के कारावास से जिसकी अवधि पांच वर्ष तक की हो सकेगी दंडित किया जाएगा और जुर्माने से भी दंडनीय होगा ।

376ग. जेल, प्रतिप्रेषण गृह, आदि के अधीक्षक द्वारा संभोग—जो कोई तत्समय प्रवृत्त किसी विधि द्वारा या उसके अधीन स्थापित किसी जेल, प्रतिप्रेषण गृह या अभिरक्षा के अन्य स्थान का या बालकों की किसी संस्था का अधीक्षक या प्रबंधक होते हुए अपनी शासकीय स्थिति का लाभ उठाकर जेल, प्रतिप्रेषण गृह, स्थान या संस्था की किसी स्त्री निवासी को, अपने साथ ऐसा मैथुन करने के लिए उत्प्रेरित या विलुब्ध करेगा जो बलात्संग के अपराध की कोटि में नहीं आता है, वह दोनों में से किसी भांति के कारावास से जिसकी अवधि पांच वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुर्माने से भी दंडनीय होगा ।

376घ. अस्पताल के प्रबंध या कर्मचारिवृंद आदि के किसी सदस्य द्वारा उस अस्पताल में किसी स्त्री के साथ संभोग—जो कोई, किसी अस्पताल के प्रबंध में होते हुए या किसी अस्पताल के कर्मचारिवृंद में होते हुए, अपनी शासकीय स्थिति का लाभ उठाकर उस अस्पताल में किसी स्त्री के साथ ऐसा मैथुन करेगा जो मैथुन बलात्संग की कोटि में नहीं आता है वह दोनों में से किसी भांति के कारावास से जिसकी अवधि पांच वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुर्माने से भी दंडनीय होगा ।

3.4. वर्तमान स्थिति पर्याप्त—यह नोट किया जाए कि भारतीय दंड संहिता की धारा 376ख, 376ग और 376घ के अधीन अपराधों के लिए विहित दंड पांच वर्ष तक का कारावास और जुर्माना है । उन अपराधों के लिए जो तकनीकी रूप से बलात्संग की कोटि में नहीं आते हैं या जिसके बारे में यह साबित नहीं किया जा सकता कि वे बलात्संग की सभी विधिक अपेक्षाओं को पूरा करते हैं, के लिए उपबंध इन तीन विनिर्दिष्ट धाराओं में किए गए हैं । अपराध संज्ञेय हैं, किन्तु कोई भी गिरफ्तारी किसी वारंट या किसी मजिस्ट्रेट के किसी आदेश के बिना नहीं की जानी है । सभी अपराध जमानतीय हैं और उनका केवल सेशन न्यायालय द्वारा ही विचारण किया जा सकता है । जहां तक हमने देखा है अभी तक चलन में इन धाराओं से कोई समस्याएं पैदा नहीं हुई हैं ।

यह भी दोहराया जा सकता है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 376 स्वयं (बलात्संग से संबंधित मुख्य धारा) अभिरक्षा में बलात्संग के लिए न्यूनतम दंड का उपबंध करने के लिए अब संशोधित कर दी गई है ।

हमें ऐसा प्रतीत होता है कि स्वभावी अपराधियों को, बलात्संग या सजातीय अपराध करने से जिनके अंतर्गत विलुब्ध करने या दिक करने के अधिक चतुराई वाले रूप भी हैं, भयोपरत करने के लिए परिकल्पित, दंड संहिता के वर्तमान उपबंध, जहां तक उनका सम्बन्ध अभिरक्षा में स्त्रियों से है, उचित रूप से पर्याप्त हैं । कोई गम्भीर व्यावहारिक कठिनाइयां हमारी जानकारी में लाए जाने के अभाव में हम इन उपबंधों में किसी परिवर्तन की सिफारिश करना आवश्यक नहीं समझते हैं ।

अध्याय 4

सिविल प्रक्रिया संहिता

4.1. संहिता के अधीन गिरफ्तारी—प्रक्रिया सम्बन्धी विधियों की बाबत अपनी चर्चा को पूरा करने के लिए हम सिविल प्रक्रिया संहिता की संक्षेप में चर्चा करते हैं । जहां तक हम देख सकते हैं कि कोई व्यक्ति उस संहिता के अधीन तब गिरफ्तार किया जा सकता है (i) जब वह ऐसा साक्षी है जो सिविल न्यायालय[1] द्वारा निकाले गए समन के पालन में पेश नहीं होता है, या (ii) ऐसा व्यक्ति है जिसकी, निर्णय के पूर्व, गिरफ्तारी मुकदमे के लंबन के दौरान उसके कुछ अनुचित आचरण के कारण आवश्यक[2] हो जाए या (iii) उसके विरुद्ध किसी डिक्री के पारित हो जाने के पश्चात् वह डिक्री की पुष्टि करने में असफल रहता है और डिक्री ऐसी प्रकृति की है कि निष्पादन[3] में उसके विरुद्ध गिरफ्तारी का वारंट निकाला जा सकता है ।

4.2. निष्पादन में से अन्यथा स्त्रियों की गिरफ्तारी—समन के पालन में असफलता लिए स्त्री साक्षियों के गिरफ्तार किए जाने वाले मामले सिद्धांत रूप से तो पैदा हो सकते हैं, किन्तु चलन में मुश्किल से ही ऐसे मामले हुए होंगे । यही बात निर्णय के पूर्व गिरफ्तारी के मामलों को लागू होती हैं । इसलिए ऊपर वर्णित पहली दो स्थितियों[4] का स्त्रियों के सम्बन्ध में कोई महत्व नहीं है ।

4.3. निष्पादन में गिरफ्तारी—जहां तक किसी डिक्री के निष्पादन में निर्णीत ऋणी की गिरफ्तारी का संबंध है सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 56 धन के लिए किसी डिक्री के निष्पादन में किसी स्त्री की गिरफ्तारी का विनिर्दिष्ट रूप से प्रतिषेध करती है । सिद्धांत रूप से जहां डिक्री धन के लिए नहीं है वहां निष्पादन में गिरफ्तारी अनुज्ञेय है भले ही निर्णीत ऋणी स्त्री है । किन्तु ऐसे मामले बहुत ही कम हैं ।

4.4. पारिणामिक स्थिति यह है कि सिविल प्रक्रिय में स्त्रियों की गिरफ्तारी से गंभीर पैमाने पर कोई व्यवहारिक कठिनाइयां प्रतीत नहीं होती हैं जिनके बारे में, विधि सुधार की दृष्टि से ध्यान देना आवश्यक है ।

अध्याय 5

अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1953

5.1. **अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958**—आयोग परिवीक्षा पर स्त्रियों के छोड़े जाने के सम्बन्ध में कुछ सुझाव भी देना चाहता है । वर्तमान प्रयोजन के लिए अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 के मुख्य उपबंधों की स्कीम संक्षेप में वर्णित करना पर्याप्त है जो कुछ क्षेत्रों के सिवाए जहां परिवीक्षा पर छोड़ा जाना दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 द्वारा या किसी स्थानीय अधिनियम द्वारा (जैसे उत्तर प्रदेश में है) शासित होता है । 1958 का केन्द्रीय अधिनियम, अपराधियों के, उन्हें जेल जीवन के हानिकारक प्रभावों के अधीन किए बिना समाज के उपयोगी और स्वावलंबी सदस्यों के रूप में सुधार और पुनर्वास पर उत्तरोत्तर बल प्रतिबिंबित करता है । अधिनियम में अपराधी को, उसे दंडादिष्ट किए बिना छोड़ना अनुध्यात है । छोड़ना दो प्रकार का है । अपराधी को "भर्त्सना" (धारा 3) के पश्चात् छोड़ दिया जा सकता है या—जो अधिक बार होता है—अपराधी को सदाचरण की परिवीक्षा (धारा 4) पर छोड़ा जा सकता है ।

5.2. **धारा 3 : भर्त्सना पर छोड़ना**—अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 की धारा 3 के अधीन जब कोई व्यक्ति भारतीय दंड संहिता की धारा 379, 380, 381, 404 या 420 के अधीन दंडनीय कोई अपराध अथवा भारतीय दंड संहिता या किसी अन्य विधि के अधीन दो वर्ष से अनधिक के लिए कारावास या जुर्माने अथवा दोनों से दंडनीय कोई अपराध करने का दोषी पाया जाता है और उसके विरुद्ध कोई पूर्व दोषसिद्धि साबित नहीं होती है तो न्यायालय मामले की परिस्थितियों को, जिनके अंतर्गत अपराध की प्रकृति और अपराधी का चरित्र भी है, ध्यान में रखते हुए उसे समयक् भर्त्सना के पश्चात् छोड़ सकेगा । इस धारा में वर्णित अपराधों में चोरी और उसके गुरुतर रूप, सम्पत्ति का आपराधिक दुर्विनियोग और सम्पत्ति आदि के परिदान को उत्प्रेरित करने के लिए किया गया छल आते हैं । अपराधी की आयु या लिंग के सम्बन्ध में कोई निर्बंधन नहीं है, किन्तु अपराध विनिर्दिष्ट प्रवर्ग का होना चाहिए । यह देखा जा सकता है कि धारा का विस्तार उसके भीतर आने वाले अपराधों के संबंध में उचित रूप से संकीर्ण है ।

5.3. **धारा 4 : सदाचरण की परिवीक्षा पर छोड़ना**—अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 की धारा 4 द्वारा व्यापक शक्ति प्रदत्त की गई है । धारा 4 में न्यायालय को अपराधी को सदाचरण की परिवीक्षा पर छोड़ने की शक्ति प्रदत्त की गई है यदि ऐसा व्यक्ति "मृत्यु या आजीवन कारावास से दंडनीय नहीं" अपराध का दोषी पाया जाता है और यदि दोषसिद्धि करने वाले न्यायालय की राय है कि मामले की परिस्थितियों को जिनके अंतर्गत अपराध की प्रकृति और अपराधी का चरित्र भी है, ध्यान में रखते हुए उसे सदाचरण की परिवीक्षा पर छोड़ देना समीचीन है । छोड़ना, अपराधी के प्रतिभुओं सहित या उनके बिना ऐसा बंधपत्र देने पर कि वह तीन वर्ष से अनधिक की ऐसी अवधि के दौरान, जैसी न्यायालय निदिष्ट करे, आहूत किए जाने पर उपस्थित होगा और दंडादेश प्राप्त करेगा और इस बीच परिशान्ति कायम रखेगा और सदाचारी रहेगा, आदिष्ट किया जाना है । अपराधी का न्यायालय की अधिकारिता के भीतर नियत निवास स्थान होना चाहिए या उसका ऐसा निवास स्थान या नियमित उपजीविका का स्थान होना चाहिए जिसमें बंधपत्र की कालावधि के दौरान उसके रहने की संभाव्यता है । ऐसा आदेश करने से पूर्व न्यायालय को मामले के बारे में, संबंधित परिवीक्षा अधिकारी की रिपोर्ट पर यदि कोई हो, विचार करना होगा । छोड़ने के आदेश के साथ, यदि न्यायालय ऐसा विनिश्चय करता है तो एक पर्यवेक्षण आदेश हो सकता है । ऐसी दशा में अपराधी आदेश में नामित किसी पारिवीक्षा अधिकारी के पर्यवेक्षण के अधीन रहता है । पर्यवेक्षण की अवधि न्यायालय द्वारा विहित की जाएगी किन्तु यह एक वर्ष से कम की नहीं हो सकती । इस धारा में भी अपराधी की आयु और लिंग के सम्बन्ध में कोई निर्बंधन नहीं है परन्तु यह तब जब इस धारा की अन्य शर्तें पूरी की जाती हैं । अपराध "मृत्यु या आजीवन कारावास" से दंडनीय नहीं होना चाहिए—जिससे "मृत्यु से या आजीवन कारावास से दंडनीय नहीं" अभिप्रेत होना वास्तव में आशयित है । दूसरे शब्दों में, इस धारा से न केवल (1) मृत्यु से दंडनीय अपराध, वरन् (2) ऐसे अपराध भी, जिनके लिए विहित दंड या दंडों में से एक आजीवन कारावास है, अपवर्जित हैं ।

5.4. **धारा 6 : 21 वर्ष से कम आयु वाले अपराधी**—किसी अपराधी को भर्त्सना या परिवीक्षा पर छोड़ने की शक्ति जैसी अपराधी परिवीक्षा अधिनियम 1958 की धारा 3 और 4 में बनाई गई है, वैवेकिक[1] है, किन्तु उस अधिनियम की धारा 6 में यह अनुध्यात है कि अल्पवय अपराधियों के मामले में उस शक्ति का प्रयोग साधारणतया किया जाना ही चाहिए, जब तक कि अपराधी को दोषसिद्ध करने वाले न्यायालय का समाधान नहीं हो जाता है कि मामले की परिस्थितियों को, जिनके अंतर्गत अपराध की प्रकृति और अपराधी का चरित्र भी है, ध्यान में रखते हुए यह वांछनीय नहीं होगा कि उससे धारा 3 या धारा 4 के अधीन व्यवहार किया जाए, और यदि न्यायालय अपराधी को कारावास का कोई दंड देता है तो वह वैसा करने के अपने कारणों को अभिलिखित करेगा ।

5.5. **किशोर न्याय अधिनियम, 1986 की धारा 21 और धारा 22**—अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 6 का, जिसका सारांश ऊपर[2] दिया गया है अब किशोर न्याय अधिनियम, 1986 के उपबंधों के साथ पठन किया जाना चाहिए । उस अधिनियम की धारा 21 के अधीन किशोर न्यायालय इस बात के लिए प्राधिकृत है कि (1) किशोर को उपदेश या भर्त्सना के पश्चात् घर जाने दे या (2) यह निदेश दें कि किशोर को किसी विनिर्दिष्ट अवधि के लिए किसी विशेष गृह में भेजा जाए । किसी किशोर अपराधी के लिए जिसका किशोर न्याय अधिनियम, 1986 के अधीन किशोर न्यायालय के समक्ष विचारण किया जाता है परंपरागत रूप में कारावास का प्रश्न ही नहीं उठता । उस अधिनियम की धारा 22 की उपधारा (1) में, जो नीचे दी गई है, इस सम्बन्ध में एक विनिर्दिष्ट उपबंध किया गया है :

> "(1) तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी तत्प्रतिकूल बात के होते हुए भी किसी अपचारी किशोर को मृत्यु या कारावास का दंडादेश नहीं दिया जाएगा और न जुर्माना देने में व्यतिक्रम होने पर या प्रतिभूति देने में व्यतिक्रम होने पर कारागार सुपुर्द किया जाएगा :
>
> परन्तु जहां ऐसे किशोर ने, जिसने चौदह वर्ष की आयु प्राप्त कर ली है कोई अपराध किया है और किशोर न्यायालय का समाधान हो जाता है कि किया गया अपराध ऐसी गंभीर प्रकृति का है या उसका आचरण और आचार ऐसा रहा है कि यह बात उसके हित में या विशेष गृह में के अन्य किशोरों के हित में नहीं होगी कि उसे ऐसे विशेष गृह में भेजा जाए और यह कि इस अधिनियम के अधीन उपबंधित अन्य अध्युपायों में से कोई भी उपयुक्त या पर्याप्त नहीं है वहां किशोर न्यायालय अपचारी किशोर के ऐसे स्थान में और ऐसी रीति से, जिसे वह ठीक समझे सुरक्षित अभिरक्षा में रखे जाने का आदेश कर सकेगा और उस मामले की रिपोर्ट राज्य सरकार को आदेशार्थ देगा ।"

5.6. **धारा 6 का परिवीक्षा अधिनियम की अन्य धाराओं के साथ अंतर्संबंध**—यह नोट किया जाए कि अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958[3] की धारा 6 किसी अपराधी को परिवीक्षा या भर्त्सना पर छोड़ने के लिए अपने आप में एक स्वतंत्र स्रोत नहीं है । वरन् यह उस शक्ति का प्रयोग करने के लिए आवश्यकता की ओर यदि 21 वर्ष से कम आयु वाला कोई व्यक्ति कारावास से (किन्तु आजीवन कारावास से नहीं) दंडनीय कोई अपराध करने का दोषी पाया जाता है तो ऐसे व्यक्ति को कारावास से दंडादिष्ट करने की न्यायालय की शक्ति पर निर्बंधन लगाकर और अपराधी पर कारावास का कोई दंडादेश करने के लिए अपने कारण अभिलिखित करने की अपेक्षा करके, यदि न्यायालय ऐसा कोई दंडादेश पारित करता है, न्यायालय का ध्यान आकर्षित करती है ।

5.7. जैसा ऊपर वर्णन किया गया है किसी अपराधी को भर्त्सना देकर छोड़ने की शक्ति (धारा 3) और परिवीक्षा पर छोड़ने की शक्ति (धारा 4) दोनों पर्याप्त रूप से व्यापक हैं कि उनके अंतर्गत पुरुष और महिला अपराधी आ जाएं । किन्तु इन उपबंधों में परिवीक्षा की वांछनीयता पर, वहां विशेष ध्यान देने की आवश्यकता पर, जहां अपराधी कोई महिला है, इस रूप में बल नहीं दिया गया है । अभिरक्षा में महिलाओं के सम्बन्ध में इन समस्याओं की बाबत जो भूतकाल में पैदा हुई हैं ऐसे कुछ बल सम्मिलित करना उचित होगा । बल अभिप्राप्त करने की एक रीति यह हो सकती है कि न्यायालय से इस तथ्य को गणना में लेने की अपेक्षा की जाए कि उन मामलों में, जिनको परिवीक्षा अधिनियम लागू होता है अपराधी कोई स्त्री है । इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि परिवीक्षा अधिनियम का उद्देश्य मात्र भय के स्थान पर सुधार का प्रोत्साहन करना है और जेल में कैद के स्थान पर जेल के बाहर उपचार के लिए सुविधाएं पैदा करना है, यह उपयुक्त होगा कि यदि वह उद्देश्य स्त्रियों के सम्बन्ध में अधिक दृढ़ता से प्राप्त किया जाता है ।

4—5 Min. of L. & J./ND/90

5.8. अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 3 का प्रस्तावित संशोधन—यदि ऊपर दिया गया तर्क स्वीकार कर लिया जाता है तो अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 3 का कुछ शब्द[4] अंत:स्थापित करके संशोधन किया जा सकता है। धारा 3 के मुख्य पैरे का अंतिम भाग तब इस प्रकार होगा :—

> "———— और जिस न्यायालय ने उस व्यक्ति को दोषी पाया है उसकी यह राय है कि मामले की परिस्थितियों को, जिनके अंतर्गत अपराध की प्रकृति और अपराधी का चरित्र भी है और इस तथ्य को, कि **अपराधी कोई स्त्री है**, ध्यान में रखते हुए ऐसा करना समीचीन है तब तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी वह न्यायालय उसे दंडित करने या उसे धारा 4 के अधीन सदाचरण की परिवीक्षा पर छोड़ने के बजाए उसे सम्यक् भर्त्सना के पश्चात् छोड़ सकेगा।"

5.9. परिवीक्षा अधिनियम की धारा 4(1) का प्रस्तावित संशोधन—उन्हीं आधारों पर परिवीक्षा अधिनियम की धारा 4(1) के कुछ शब्द, जो न्यायालय से इस तथ्य के ध्यान में रखने की अपेक्षा करेगें कि अपराधी कोई स्त्री है, अंत:स्थापित करके संशोधन किया जा सकता है। ऐसे संशोधन के पश्चात् धारा 4(1) का मुख्य पैरा इस प्रकार होगा :—

> "(1) जब कोई व्यक्ति ऐसा कोई अपराध करने का दोषी पाया जाता है जो मृत्यु या आजीवन कारावास से दंडनीय नहीं है और जिस न्यायालय ने उस व्यक्ति को दोषी पाया है उसकी यह राय है कि मामले की परिस्थितियों को, जिनके अंतर्गत अपराध की प्रकृति और अपराधी का चरित्र भी है और इस तथ्य को, कि अपराधी कोई स्त्री है, ध्यान में रखते हुए उसे सदाचरण की परिवीक्षा पर छोड़ देना समीचीन है तब तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी वह न्यायालय उसे, तुरन्त दंडित करने के बजाए, निदेश दे सकेगा कि उसे, प्रतिभुओं के सहित या उनके बिना, उसके द्वारा ऐसा बंधपत्र देने पर छोड़ दिया जाए कि वह तीन वर्ष से अनधिक की ऐसी अवधि के दौरान, जैसी न्यायालय निर्दिष्ट करे आहूत किए जाने पर उपस्थित होगा और दंडादेश प्राप्त करेगा और इस बीच परिशांति कायम रखेगा और सदाचारी रहेगा।"

5.10. दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 360—उन क्षेत्रों में जहां अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 लागू नहीं होता है, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 360 परिवीक्षा पर अपराधियों को छोड़ने के विषय को विनियमित करती है। उस धारा में संशोधन, जहां कहीं आवश्यक हों, उन्हीं आधारों पर जिनका परिवीक्षा अधिनियम में ऊपर सुझाव दिया गया है, किए जा सकते हैं। किन्तु अपराधों से सम्बन्धित नीति के विषय के रूप में सम्पूर्ण भारत को अपराधी परिवीक्षा अधिनियम के विस्तार के अंतर्गत लाना अधिमान्य योग्य होगा।

5.11. किशोर न्याय अधिनियम—जहां तक किशोर न्याय अधिनियम, 1986 का संबंध है उस अधिनियम में "किशोर" की परिभाषा के अंतर्गत 18 वर्ष तक की आयु की लड़कियाँ आती हैं और उस आयु को बढ़ाने की कोई आवश्यकता नहीं है।

अध्याय 6

मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम, 1987

6.1. स्त्री कैदी और मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम, 1987—किसी व्यक्ति को गिरफ्तारी, निरोध और दोषसिद्धि के अतिरिक्त जिससे अभिरक्षा करनी पड़े स्त्रियों के कारावास के लिए अवसर वहां भी पैदा हो सकते हैं जहां भले ही अपराध का कोई आरोप न हो किन्तु कोई स्त्री मानसिक स्वास्थ्य से संबंधित विधायन के अधीन निरोध में रखी जाती है। भारत ने हाल ही में मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम, 1987 अधिनियमित किया है और यहां उस अधिनियम के ऐसे उपबंधों के प्रति निर्देश किया जाएगा जो वर्तमान प्रयोजन के लिए महत्वपूर्ण हैं।

6.2. मानसिक संस्थाओं में भर्ती—मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम, 1987 में, मनश्चिकित्सीय अस्पतालों और मनश्चिकित्सीय परिचर्या गृहों की, जो ऐसी प्रधान संस्थाएँ है जिनमें मानसिक रूप से बीमार व्यक्तियों का उपचार किया जाना है, स्थापना अनुध्यात की गई है (धारा 5)। उपचार के लिए ऐसी संस्थाओं में भर्ती (i) मानसिक रूप से बीमार व्यक्ति या उसके संरक्षक के अनुरोध पर, या (ii) (ऐसे अनुरोध के बिना भी) मानसिक रूप से बीमार व्यक्ति के नातेदार या मित्र द्वारा, कुछ चिकित्सीय और अन्य औपचारिकताओं के पालन के अधीन रहते हुए, हो सकती है। पूर्वतर प्रवर्ग के अधीन भर्ती किए गए रोगी "स्वैच्छिक रोगी" कहलाते हैं (धारा 16 से 18)। जबकि पश्चात्वर्ती प्रवर्ग के अधीन भर्ती किए गए रोगी "विशेष परिस्थितियों" के अधीन भर्ती किए गए रोगी कहलाते हैं (धारा 19)। किसी मनश्चिकित्सीय संस्था में प्ररूपिक भर्ती किसी "ग्रहणआदेश" द्वारा की जाती है। ग्रहणआदेश के लिए आवेदन मनश्चिकित्सीय अस्पताल या मनश्चिकित्सीय परिचर्या गृह के भारसाधक चिकित्सा अधिकारी द्वारा या मानसिक रूप से बीमार व्यक्ति के पति-पत्नी या उसके किसी अन्य नातेदार द्वारा किया जा सकेगा (धारा 20)।

अधिनियम की धारा 2(1) में किसी मानसिक रूप से बीमार व्यक्ति की परिभाषा ऐसे व्यक्ति के रूप में की गई है जिसको **मानसिक मंदता** से भिन्न किसी मानसिक विकार के कारण उपचार की आवश्यकता है।

पुलिस भी अपने थाने की सीमाओं के भीतर इधर-उधर घूमते फिरते पाए गए किसी ऐसे व्यक्ति को अपनी संरक्षा में लेने के लिए प्राधिकृत है जहां पुलिस अधिकारी के पास यह विश्वास करने का कारण हो कि ऐसा व्यक्ति मानसिक रूप से इतना बीमार है कि वह स्वयं अपनी देखरेख करने में असमर्थ है। पश्चात्वर्ती कार्यवाहियाँ किसी मजिस्ट्रेट के समक्ष होती हैं (धारा 23 से 25)।

वह व्यक्ति जो मात्र मानसिक रूप से मंद है, साधारणतया मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम की परिधि के भीतर नहीं आता है। स्वयं "मानसिक विकार" अधिनियम में परिभाषित नहीं है किन्तु यदि मानसिक विकार इस प्रकृति या पैमाने का है कि उपचार कि आवश्यकता है तब उससे ग्रस्त व्यक्ति मानसिक रूप से बीमार व्यक्ति होगा।

6.3. निरोध में रखना—किसी मनश्चिकित्सीय अस्पताल या मनश्चिकित्सीय परिचर्या गृह में किसी व्यक्ति को अंतरंग रोगी के रूप में रखने का आदेश जांच के पश्चात् जिला मजिस्ट्रेट द्वारा किया जाता है (धारा 26 से 36)। प्राय: यह जिला न्यायालय का आदेश होता है जिससे मानसिक रूप से बीमार किसी व्यक्ति का किसी संस्था में अनिश्चित काल के लिए निरोध प्राप्त किया जा सकता है।

6.4. मानसिक रूप से बीमार व्यक्ति—अधिनियम में भी "मानसिक रूप से बीमार व्यक्तियों" की भर्ती और निरोध के लिए उपबंध है। वे मानसिक रूप से ऐसे बीमार व्यक्ति हैं जिनके किसी मनश्चिकित्सीय संस्था में निरोध या ले जाए जाने के लिए किसी अन्य अधिनियमिति के अधीन कोई आदेश किया गया है। विनिर्दिष्ट अधिनियमितियों में बंदी अधिनियम और सशस्त्र बलों के सम्बन्ध में अधिनियमितियां तथा दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 330 और 335 है।

6.5. परिदर्शक : धारा 37—अब हम मानसिक स्वास्थ्य विधायन से सम्बन्धित जहां तक ऐसे विधायन में दिए गए उपबंध स्त्री रोगियों के लिए महत्वपूर्ण हैं, विनिर्दिष्ट बातों की चर्चा करते हैं । मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम, 1987 की स्कीम में मनश्चिकित्सी अस्पतालों और मनश्चिकित्सीय परिचर्या गृहों में कम से कम 5 परिदर्शक होने चाहिए । धारा 37 में इस सम्बन्ध में निम्न प्रकार का उपबंध है :

"37(1) यथास्थिति, राज्य सरकार या केन्द्रीय सरकार प्रत्येक मनश्चिकित्सीय अस्पताल और प्रत्येक मनश्चिकित्सीय परिचर्या गृह के लिए कम से कम पांच परिदर्शक नियुक्त करेगी जिनमें से कम से कम एक चिकित्सा अधिकारी अधिमानतः मनश्चिकित्सक होगा और दो सामाजिक कार्यकर्ता होंगे ।

(2) राज्य की चिकित्सीय सेवाओं का प्रधान या उसका नामनिर्देशिती अधिमानतः कोई मनश्चिकित्सक राज्य में सभी मनश्चिकित्सीय अस्पतालों और मनश्चिकित्सीय परिचर्या गृहों का पदेन परिदर्शक होगा ।

(3) उपधारा (1) के अधीन परिदर्शकों के रूप में नियुक्त किए जाने वाले व्यक्तियों की अर्हताएं तथा उनकी नियुक्ति के निबंधन और शर्तें ऐसी होंगी, जो विहित की जाएं ।"

6.6. धारा 37 के संबंध में सिफारिश—मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम की धारा 37 के अधीन सरकार द्वारा नियुक्त किए जाने वाले परिदर्शकों में दो सामाजिक कार्यकर्ता होंगे । हमारे विचार में जहां कहीं यह साध्य हो कम से कम एक सामाजिक कार्यकर्ता एक स्त्री होनी चाहिए, जिससे महिला अंतरंग रोगियों के विरुद्ध आशंकित अनाचारों की जांच की जा सके और जहां कहीं आवश्यक हो उपयुक्त निवारक अध्युपायों का सुझाव भी दिया जा सके । हम सिफारिश करते हैं कि मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम, 1987 की धारा 37(1) का संशोधन "दो सामाजिक कार्यकर्ता होंगे" शब्दों के स्थान पर "दो सामाजिक कार्यकर्ता जिनमें से जहां कहीं साध्य हो कम से कम एक स्त्री होगी ।" शब्द प्रतिस्थापित करके किया जाना चाहिए ।

6.7. मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम की धारा 81—तिरस्कार से बचा जाएगा—मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम 1987 की धारा 81 में मानसिक रूप से बीमार व्यक्तियों का तिरस्कार या उनके प्रति क्रूरता को दंडित करने के लिए व्यापक उपबंध हैं । यह उपबंध निम्न प्रकार हैं :—

"81 (1) किसी मानसिक रूप से बीमार व्यक्ति के उपचार के दौरान उसका तिरस्कार (चाहे शारीरिक हो या मानसिक) नहीं किया जाएगा या उसके प्रति क्रूरता नहीं बरती जाएगी ।

(2) किसी उपचाराधीन मानसिक रूप से बीमार व्यक्ति को अनुसंधान के प्रयोजनों के लिए तब तक प्रयोग नहीं किया जाएगा जब तक कि —

(1) ऐसा अनुसंधान रोग का पता लगाने या उपचार के प्रयोजनों के लिए प्रत्यक्षतः उसके फायदे के लिए न हो, या

(2) ऐसे व्यक्ति ने स्वैच्छिक रोगी होने के नाते अपनी सहमति लिखित रूप में न दी हो या जहां ऐसा व्यक्ति (चाहे वह स्वैच्छिक रोगी हो या नहीं) अवयस्कता के कारण या अन्यथा विधिमान्य सम्मति देने के लिए अक्षम है वहां उसकी ओर से सम्मति देने के लिए सक्षम संरक्षक या अन्य व्यक्ति ने ऐसे अनुसंधान के लिए अपनी सम्मति लिखित रूप न दे दी हो ।

(3) मानसिक रूप से बीमार व्यक्ति को तंग करने वाली या मानहानिकारक संसूचनाओं के निवारण के प्रयोजन के लिए धारा 94 के अधीन इस निमित्त बनाए गए किन्हीं नियमों के अधीन रहते हुए उपचाराधीन मानसिक रूप से बीमार व्यक्ति द्वारा या उसको भेजे गए पत्र या अन्य संसूचनाएं रोकी नहीं जाएंगी, निरुद्ध नहीं की जाएंगी या नष्ट नहीं की जाएंगी ।"

6.8. मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम, 1987 की धारा 81—मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम, 1987 की ऊपर उत्कथित[2] धारा 81 पुरुष और स्त्री दोनों को लागू है और तिरस्कार या क्रूरता के प्रतिषेध को स्त्रियों को दिक करने या यातना से भी निस्संदेह देख-रेख करनी चाहिए । धारा 81 लैंगिक प्रकृति के गंभीर रूप से दिक करने पर विनिर्दिष्ट रूप से केंद्रित नहीं है । किन्तु भारतीय दंड संहिता (विशेष रूप से 1983 में उसके संशोधन के पश्चात्) गंभीर लैंगिक अपराधों के बारे में जिनके अंतर्गत अधीक्षकों या अभिरक्षा संस्थाओं के अन्य भारसाधक अधिकारियों द्वारा विलुब्ध किया जाना भी है पर्याप्त रूप से देख-रेख करती है । (भारतीय दंड संहिता की धारा 376ख, 376ग और 376घ ।[3] ऐसी स्थिति में ऊपर वर्णित प्रयोजन के लिए मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम, 1987 की धारा 81 की परिधि का विस्तार करना आवश्यक प्रतीत नहीं होता है ।

6.9. धारा 81 के अतिक्रमण के लिए शास्ति—हमें नोट करना चाहिए कि मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम, 1987 की धारा 81 के अतिक्रमण के लिए उपबंधित शास्ति कुछ नरम है । ऐसा प्रतीत होता है कि ऐसा अतिक्रमण उस अधिनियम की धारा 85 द्वारा शासित होता है जो नीचे दी गई है :—

"85. कोई व्यक्ति जो इस अधिनियम के उपबंधों में से किसी का या उसके अधीन बनाए गए किसी ऐसे नियम या विनियम का उल्लंघन करेगा, जिसके उल्लंघन के लिए इस अधिनियम में किसी शास्ति का स्पष्ट रूप से उपबंध नहीं किया गया है, दोषसिद्धि पर कारावास से, जिसकी अवधि छह मास तक की हो सकेगी या जुर्माने से, जो पांच सौ रुपए तक का हो सकेगा, या दोनों से, दंडनीय होगा ।"

6.10. मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम की धारा 85 के संशोधन की सिफारिश—हम उस अधिनियम की किसी अन्य धारा का पता चलाने में समर्थ नहीं हुए हैं जिसका ऐसे उल्लंघन से बरतने के लिए सहारा लिया जा सके । हमें ऐसा प्रतीत होता है कि मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम[3] की धारा 85 द्वारा उपबंधित छह मास तक के कारावास का दंड, धारा 81 के लिए उल्लंघन के विशेषकर वहां जहां अनाचार की शिकार कोई स्त्री[5] है, पर्याप्त नहीं है । मानसिक रूप से बीमार रोगियों की बाबत लैंगिक और अन्य रूप से दिक करने के चातुरीपूर्ण रूपों, से बरतने के लिए उच्चतर दंड की आवश्यकता है । इसलिए हमारी यह सिफारिश है कि मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम, 1987 में एक नई धारा (धारा 84क) निम्नलिखित रूप में अंतःस्थापित की जानी चाहिए :—

"84क. धारा 81 के उल्लंघन के लिए शास्ति—कोई व्यक्ति जो धारा 81 के उपबंधों का उल्लंघन करेगा, दोषसिद्धि पर, कारावास से, जिसकी अवधि, दो वर्ष तक की हो सकेगी या जुर्माने से, जो पांच हजार रुपये तक का हो सकेगा, या दोनों से, दंडनीय होगा ।"

6.11. अंतरराष्ट्रीय परिवर्तन—मानसिक रूप से बीमार स्वास्थ्य के कारणों से अभिरक्षा में स्त्रियों के संबंध में कुछ अन्तरराष्ट्रीय परिवर्तनों की चर्चा करना उचिकर होगा[6] । स्थिति का कथन इस प्रकार किया गया है :

"1975 में, सिंगापुर में अंतरराष्ट्रीय परिचारिका परिषद ने "विरुद्ध व्यक्तियों और कैदियों की देखरेख में परिचारिका की भूमिका" पर एक संकल्प अंगीकार किया । उसी वर्ष विश्व चिकित्सा संगम ने "यातना और अन्य क्रूर, अमानवीय या तिरस्कारपूर्ण बर्ताव या निरोध और कारावास के संबंध में दंड के लिए चिकित्सकों के लिए मार्गदर्शनों पर विख्यात टोकियो घोषणा" अंगीकार की ।"

अन्य स्वास्थ्य वृतियों जैसे मानसिक रोग विशेषज्ञों, मानसशास्त्रविदों आदि ने उसी समय इस क्षेत्र में अपनी आचार संहिताएं तैयार कीं । परिणामस्वरूप 18 दिसम्बर, 1982 को संयुक्त राष्ट्र महासभा ने "यातना और अन्य क्रूर, अमानवीय या तिरस्कारपूर्ण बर्ताव या दंड से कैदियों और निरुद्ध व्यक्तियों के संरक्षण में स्वास्थ्य कार्मिक विशेषकर चिकित्सकों की भूमिका से सुसंगत चिकित्सा आचार के सिद्धांत" अंगीकार किए (इन संहिताओं के सम्पूर्ण पाठ के लिए रेडिकल जर्नल आफ हैल्थ का मानव अधिकारों और स्वास्थ्य पर सितंबर-दिसंबर, 1988 का अंक देखें)" ।

अध्याय 7

अन्य विधियाँ

7.1 अन्य अधिनियमितियाँ—अभिरक्षा में स्त्रियों के सम्बन्ध में मुख्य अधिनियमितियों की चर्चा पूर्ववर्ती अध्यायों में की गई है । इन अध्यायों में दो प्रक्रिया संबंधी संहिताओं की, सुधार विधि के उपबंध और साधारण मूल दंड विधि तथा मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम, चर्चा की गई है । किसी स्त्री को किसी विशेष या स्थानीय विधि के अधीन भी किसी अपराध के लिए गिरफ्तार और अभिरक्षा में निरुद्ध किया जा सकता है । किन्तु जहां तक हम देख सकते हैं ऐसी विशेष या स्थानीय विधियां अभिरक्षा में स्त्रियों के सम्बन्ध में संभव अनाचारों की समस्याओं से, स्त्रियों से सम्बन्धित कोई असाधारण प्रश्न उठाने के अर्थ में, सीधी सुसंगत नहीं होंगी । किसी भी दशा में, यदि किसी मूल विधि चाहे साधारण या विशेष के अधीन कोई अपराध किसी स्त्री द्वारा किया गया है तो प्रक्रिया संबंधी तंत्र, जो संदिग्ध व्यक्तियों की गिरफ्तारी, निरोध और अन्य संबद्ध बातों के रूप में तत्पश्चात प्रवर्तन में आता है साधारणतया वह होगा जो दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 में दिया गया है जिस पर हमने आवश्यक सिफारिशें पहले ही[1] कर दी हैं ।

7.2 निवारक निरोध—मूल दांडिक विधायन के अतिरिक्त भारत की कानून पुस्तक में विनिर्दिष्ट रूप से प्रतिकूल क्रियाकलाप के संदिग्ध व्यक्तियों के निवारक निरोध के लिए कई अधिनियमितियाँ हैं । इन विधियों के अधीन स्त्रियों और पुरुषों को निरुद्ध किया जा सकता है और सिद्धांततः ऐसी विधियों के अधीन अभिरक्षा में निरुद्ध स्त्रियों के शोषण या दिक करने के लिए अवसर हो सकते हैं किन्तु साधारण रूप में ऐसे शोषण के सम्बन्ध में कार्यवाही भारतीय दंड संहिता में धारा 376 (1983 में यथा संशोधित) और धारा 376ख, 376ग, और 376घ (1983[2] में यथा अंतःस्थापित) के रूप में 1983 में अंतःस्थापित विशेष उपबंधों के अधीन उपयुक्त रूप से की जा सकती है । ऐसी स्थिति में हम निवारक निरोध के लिए उपबंध करने वाली विधियों के सम्बन्ध में कोई विशेष सिफारिश नहीं कर रहे हैं । निस्संदेह ऐसे रक्षोपाय जो निवारक निरोध में व्यक्तियों के संरक्षण के लिए संविधान और सुसंगत अधिनियमिति में हैं, उपलब्ध रहेंगे ।

7.3 अनपराधीकरण और सहबध्द उद्देश्य—हम नोट करते हैं कि स्त्रियों पर राष्ट्रीय विशेषज्ञ समिति द्वारा दिए गए सुझाव में यह बताया[3] गया है कि अभिरक्षा में स्त्रियों से सुसंगत विधियों की आलोचनात्मक जांच के संदर्भ में दंडित न करने, अनपराधीकरण और विसंस्थाकरण की आवश्यकता पर ध्यान भी देना होगा । निस्संदेह इस मूल्यवान सुझाव के पीछे उद्देश्य इस प्रश्न पर विचार करने की ओर ध्यान आकर्षित करना है कि (i) उन अपराधों को जिनके लिए दंड विधि उचित उपाय नहीं है कानून की पुस्तक से सम्भवतः हटाने और (ii) दूसरी बातों में यह सुनिश्चित करने के लिए कि किसी स्त्री के किसी अभिरक्षा की प्रकृति की किसी संस्था में प्रवेश को आरंभ में ही रोका जा सके, के रूप में दंड विधि में कितने परिवर्तन की आवश्यकता है । यह स्पष्ट है कि ऊपर वर्णित पहले उद्देश्य से की जाने वाली व्यापक जांच देश की सम्पूर्ण दंड विधि के संबंध में होगी । यह बहुत बड़ा उपक्रम होगा । भले ही ऐसा कोई उपक्रम कई बातों के लिए उपयोगी हो इसका केन्द्र आवश्यक रूप से केवल स्त्री अपराधी ही नहीं होंगें । यह निर्धारित करने के लिए कि क्या प्रत्येक कानून में चर्चित अपराधों के लिए दांडिक अनुशास्ति की वास्तव में आवश्यकता है, देश के प्रत्येक दांडिक कानून का पुनर्मूल्यांकन करना आवश्यक होगा ।

7.4 ध्यान में रखे जाने वाले उद्देश्य—कार्य की महत्ता मात्र ही प्रतिषेधकारी होगी । हमारे विचार में अधिक व्यवहार्य तरीका ऊपर दिए गए उद्देश्यों को ध्यान में तब रखना होगा जब कभी किसी विशिष्ट अधिनियमिति को पुनर्विलोकन करने के लिए और आवश्यक सुधार का समाज के संरक्षण और न्याय के हित

से संगत सुझाव देने के लिए लिया जाता है । हम यह भी वर्णन करना चाहेंगें कि गिरफ्तारी, जमानत और परिवीक्षा के संबंध में इस रिपोर्ट में जिन परिवर्तनों की हमने सिफारिश की है, कुछ विस्तार तक[4] निवारक के रूप में प्रवर्तनशील होनी चाहिए अर्थात् वे स्त्रियों को अभिरक्षा में से बाहर रखेंगी । उन परिवर्तनों का, सीधे अपराधीकरण प्राप्त न करते हुए कम से कम प्रभाव अभिरक्षा में स्त्रियों की संख्या में कटौती करना होगा ।

अध्याय 8

चल न्यायालय

8.1 चल न्यायालय—विधि आयोग को किए गए निर्देश में विचार के लिए प्रस्तावित प्रश्नों में से एक स्त्री कैदियों के विचारण के लिए चल न्यायालयों से संबंधित है । स्त्री कैदियों पर राष्ट्रीय विशेषज्ञ समिति की रिपोर्ट के पैरा 478 में इस संबंध में दिया गया सुझाव इस प्रभाव का है कि अभिरक्षा में स्त्रियों को शीघ्र प्रतितोष देने के लिए तुरंत उपाय के रूप में चल न्यायालयों के प्रकार की "नारी बंदी गृह अदालतें" स्थापित की जानी चाहिए । यह कथित किया गया है कि कुटुंब न्यायालय या स्त्री न्यायालय स्थिर स्थायी तंत्र हो सकते हैं चल अदालत या न्यायालय तुरंत तथा तत्काल सुधार उपाय के रूप में अपेक्षित हैं । आगे सुझाव यह है कि लंबित मामलों के ढेर निपटाने के लिए ऐसे शिविर और न्यायालय अर्जेंट रूप से, और नेमी रूप से आयोजित किए जाने चाहिए । सुझाव के अनुसार चल न्यायालय जिलावार या समूहवार आधार पर संचालित किया जाना चाहिए जिससे कि सभी कारागार और गैर-कारागार अभिरक्षा संस्थाएँ उसके अंतर्गत आ जाएं । इस सुझाव में परिकल्पित उद्देश्य अभिरक्षा में स्त्रियों को शीघ्र न्याय देना है ।

8.2 कुछ व्यवहार्य पहलुओं पर विचार—हम इस सुझाव के पीछे भावना की सराहना करते हैं, हमें प्रतीत होता है कि यदि सुझाव का कार्यान्वयन किया जाना है तो कुछ व्यवहार्य पहलू होंगे जिनपर विचार करना होगा । एक ओर यदि चल न्यायालय उस कारागार के निकट आयोजित किया जाता है जिसमें स्त्री कैदी रखे गये हैं तब वहां न्यायालय, कार्मिक, साक्षियों और मामले से संबंधित अन्यों तथा अभिलेखों के परिवहन की व्यवहार्य समस्या होगी । यातायात अपराधों की तुलना उपयुक्त नहीं होगी । यातायात अपराधों से सम्बंधित विचारणों में अंतर्वलित प्रश्न अत्यन्त सरल हैं । साधारणतया किन्हीं साक्षियों की परीक्षा नहीं की जाती है और मामले का विनिश्चय ड्यूटी पर यातायात कान्स्टेबल की रिपोर्ट देखने के पश्चात् किया जाता है । उसकी तुलना में उन अपराधों में, जिनमें कारावास का संभावी दंडादेश अंतर्वलित है, प्रसामान्यतया एक से अधिक साक्षियों की परीक्षा करनी होगी । दस्तावेजों और वस्तुओं को विचारण के लिए तैयार रखना होगा । इनमें से कुछ वस्तुएँ आर्थिक दृष्टि से मूल्यवान होंगी । कुछ अन्य जबकि उनका धनीय मूल्य थोड़े न हो मामले के लिए अतिमहत्वपूर्ण हो सकते हैं । उदाहरणार्थ आयुध, वस्त्र और अन्य वस्तुएँ जिनकी न्याय संबंधी वैज्ञानिकों द्वारा जांच की गई है । यह सामान्य अनुभव है कि सभी साक्षी एक ही समय में हाजिर नहीं होते हैं जिससे चल न्यायालय को कारावास का एक से अधिक बार परिदर्शन करना होगा ।

8.3. एक अन्य जटिल समस्या का अनुमान लगाना चाहिए और उसका समाधान करना चाहिए जब किसी सेशन न्यायालय द्वारा अनन्य रूप से विचारणीय किसी आपराधिक मामले में एक या अधिक पुरुष अभियुक्तों के साथ किसी अभियुक्त के रूप में कोई स्त्री भी है तब पुरुष अभियुक्त का पृथकतः विचारण करना पड़ सकता है । किन्तु इसमें दो भिन्न न्यायालयों द्वारा उन्हीं साक्षियों की परीक्षा करनी होगी और वह प्रश्न जिसका उत्तर देना अपेक्षित है कि उस स्थिति पर कैसे काबू पाया जाएगा जहां परस्पर विरोधी विनिश्चय दो भिन्न न्यायालयों द्वारा दिए जाएंगे क्योंकि संबंधित न्यायालय समान साक्षियों के साक्ष्य के निर्धारण में असहमत हो सकते हैं और परस्पर विरोध निष्कर्ष निकाल सकते हैं । ऐसी स्थिति से बचने के लिए सेशन न्यायालयों द्वारा विचारणीय मामले चल न्यायालयों की परिधि से अपवर्जित किए जा सकते हैं यदि यह विचार अन्यथा साध्य और वांछनीय समझा जाता है । निस्संदेह वही समस्या किसी सेशन न्यायालय द्वारा अनन्य रूप से विचारणीय मामलों में पैदा होगी और शायद इस समस्या का इसे बने रहने देने के सिवाए कोई समाधान नहीं है ।

8.4 स्त्री कैदियों की छोटी संख्या—इसके अतिरिक्त किसी विशिष्ट जेल या उपजेल में विचारणाधीन स्त्री कैदियों की, जिनके मामले विचारण के लिए तैयार हैं, संख्या इतनी बड़ी न हो कि पूरे दिन

बैठकर एक न्यायालय का उपयोग, बड़ी संख्या में मामलों का निपटारा करने के लिए किया जा सके । दूसरे शब्दों में, यदि वह सुविधा दी जाती है जिसका सुझाव दिया गया है तो उससे होने वाला संभाव्य फायदा अनुपाततः उपेक्षायोग्य होगा और यदि विचार अनेक जिला जेलों को संयुक्त करना है तो अधिकारिता और कार्मिक की समस्याएँ होंगी । यह संदेहपूर्ण प्रतित होता है कि जब ऊपर वर्णित सभी पहलुओं को गणना में लिया जाएगा तब इस सुझाव का कोई उपयोगी परिणाम निकलेगा ।

8.5 स्त्री कैदियों की संख्या में कमी—इसका यह अर्थ नहीं है कि अभिरक्षा में स्त्रियों से संबंधित मामलों के शीघ्र और शांत विचारण के संबंध में विधिक स्थिति की रचना करने के लिए सभी प्रयास छोड़ देने चाहिए । इस रिपोर्ट में कहीं और मूल दंड विधि, प्रक्रिया की विधि और मानसिक स्वास्थ्य संस्थाओं के संबंध में विधि में कुछ परिवर्तन करने के लिए सुझाव दिए गए हैं । इस संदर्भ में हम स्त्रियों को जमानत मंजूर करने के संबंध में विधि को विशेष महत्व देते हैं जिस पर हमने समुचित अध्याय[1] में विनिर्दिष्ट सुझाव दिए हैं । यदि इन सुझावों को कार्यान्वित किया जाता है तो अभिरक्षा में स्त्रियों की संख्या में कमी लाई जा सकती है और यदि ऐसा हो जाए तो चल न्यायालयों का उपबंध करने का प्रश्न नहीं रहेगा भले ही ऐसी सुविधा का सृजन व्यवहार्य समझा जाता है । जहां तक संभव हो उद्देश्य यह हो कि स्त्री विचारणाधीन कैदियों की संख्या को न्यूनतम रखा जाए । परिवीक्षा[2] से संबंधित विधि को संशोधित करने के हमारे सुझाव को भी उसी स्वरूप में देखा जाए । ऐसे संशोधनों से दोषसिद्धि के पश्चात् कारागार में जाने वाली स्त्रियों की संख्या कम हो जाएगी ।

5—5 Min. of L. & J./ND/90

अध्याय 9

कारागारों संबंधी स्थिति

9.1 **संवैधानिक स्थिति**—स्त्री कैदियों पर राष्ट्रीय विशेषज्ञ समिति की रिपोर्ट में चर्चित कई बातें कारागारों के वास्तविक प्रशासन से संबंधित हैं और प्रश्न उठ सकता है कि क्या इस संबंध में कुछ सुधारों पर विचार किया जा सकता है । दृष्टांतस्वरूप उन विषयों का वर्णन किया जा सकता है जिनमें वे क्षेत्र दर्शित हैं जहां अभिरक्षा में स्त्री कैदियों के दिक करने, शोषण या विक्षोभ की संभावनाएँ पैदा हो सकती है .

(क) शारीरिक संरक्षण ।

(ख) वाससुविधा और स्वच्छता की दशाएँ ।

(ग) कैदियों का शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य विशेष रूप से वहां जहां किसी कैदी पर अनुशासन या उपचार द्वारा मानसिक रूप में हानिकारक प्रभाव पड़ने की संभाव्यता है ।

(घ) पुरूष और स्त्री कैदियों का पृथक्करण ।

(ङ) सह-कैदियों से सुरक्षा ।

(च) एकांत परिरोध ।

(छ) कैदियों का उपचार ।

(ज) सामाजिक पहलू जैसे कुटुम्ब के सदस्य और मित्रों से मिलना ।

(झ) अस्थायी छोड़ा जाना और परोल ।

9.2 **राज्यों की सक्षमता के भीतर बातें**—जबकि कैदियों की बेहतरी के लिए विषय अति महत्वपूर्ण रूप में वर्णित किए गए हैं यह प्रतीत होता है कि इस विषय का अधिकतम भाग अनन्य रूप से राज्यों की विधायी सक्षमता के भीतर आता है । यह इसलिए है क्योंकि कारागारों और कैदियों का विषय राज्य सूची के भीतर आता है । इस कारण से आवश्यक विधायी कार्रवाई राज्यों को करनी होगी । हम राज्य सूची का तात्त्विक भाग उत्कथित करते हैं :

"4. कारागार सुधारालय, बोर्स्टल संस्थाएँ और उसी प्रकार की अन्य संस्थाएँ और उनमें निरुद्ध व्यक्ति ।"

यह प्रविष्टि कारागारों की दशाओं को सम्मिलित करने के लिए पर्याप्त व्यापक है ।[1] इसलिए हम ऊपर वर्णित विषयों की चर्चा नहीं कर रहे हैं ।

अध्याय 10

निष्कर्ष और सिफारिशें

रिपोर्ट के पूर्वोत्तर अध्यायों में की गई चर्चा के प्रकाश में, आयोग की राय है कि अभिरक्षा में स्त्रियों के दिक करने को पुरोबंधित करने के लिए और ऐसी स्त्रियों की संभव विस्तार तक संरक्षा करने के लिए उपयुक्त उपबंध करना आवश्यक है । यह महसूस किया जाता है कि प्रत्येक उपबंध के, जिस प्रकार वह दंड प्रक्रिया संहिता में विद्यमान है, संशोधन से प्रयोजन पर्याप्त रूप से सिद्ध नहीं होगा । वे उपबंध जिनका संशोधन इसमें इसके पूर्व की गई चर्चा के प्रकाश में अपेक्षित है । दंड प्रक्रिया संहिता के विभिन्न अध्यायों में बिखरे हुए हैं । इन परिस्थितियों में अभिरक्षा में स्त्रियों की संख्या पर विशेष रूप से ध्यान देकर किए गए संशोधनों पर ध्यान केंद्रित नहीं होगा यदि वे प्रत्येक उपबंध में किए जाएं और संबंधित अधिकारी ऐसे उपबंधों से, इस निमित्त विशेष प्रयास किए बिना, पूर्ण रूप से अवगत नहीं होंगें । इसी प्रकार महिला संगठन और अभिरक्षा में संबंधित स्त्रियों के नातेदार भी ऐसी स्त्रियों के अधिकारों की बाबत अपने को जानकारी देने के लिए उसी कठिनाई का अनुभव कर सकते हैं । इसलिए, आयोग की राय में यह वांछनीय है कि जहां तक संभव हो, इस निमित्त विशिष्ट रूप से किए गए उपबंध दंड प्रक्रिया संहिता के पृथक् अध्याय में समाविष्ट किए जाएं जिससे पदधारी तथा महिला संगठन और अभिरक्षा में स्त्रियों और उनके नातेदार, बहुत अधिक प्रयास किए बिना ऐसी स्त्रियों के अधिकारों और संबंधित पदधारियों की बाध्यताओं से अपने आपको अवगत करा सकें ।

सुविधा के लिए स्त्रियों तथा प्रासंगिक रूप से बालकों की गिरफ्तारी उनसे परिप्रश्न करने और उनकी अभिरक्षा और आयोग के निष्कर्षों को समाविष्ट करने वाले प्रस्तावित उपबंधों से संबंधित प्रस्तावित अध्याय का एक प्ररूप इसमें इसके पश्चात् दिया जा रहा है । **किन्तु ऐसा करने से पूर्व निष्कर्ष और सिफारिशें मोटे तौर पर दी जा रही हैं :**

सिफारिशों का संक्षेप में सारांश

(1) उस दशा में जिसमें किसी स्त्री का गिरफ्तार किया जाना अपेक्षित है संबंधित पुलिस अधिकारी स्त्री के शरीर को वास्तव में नहीं छुएगा और अभिरक्षा में उसके समर्पण की उपधारण कर सकेगा । यह सिफारिश इसलिए की जा रही है कि संबंधित स्त्री की गरिमा कायम रखी जाए **(पैरा 2.2)** ।

(2) साधारणतया कोई भी स्त्री सूर्यास्त के पश्चात् और सूर्योदय के पूर्व गिरफ्तार नहीं की जाएगी । आपवादिक मामलों में जिनमें ऐसे घंटों के दौरान गिरफ्तारी अपेक्षित है (1) ठीक वरिष्ठ अधिकारी की पूर्व अनुज्ञा अभिप्राप्त की जाएगी, या (2) यदि मामला अत्यावश्यकता का है तो गिरफ्तारी के पश्चात् कारणों सहित रिपोर्ट ठीक वरिष्ठ अधिकारी और मजिस्ट्रेट को की जाएगी **(पैरा 2.3)** ।

(3) जब कभी किसी स्त्री की चिकित्सीय परीक्षा की जाती है तब परीक्षा शिष्टता का कड़ा ध्यान रखते हुए किसी महिला रजिस्ट्रीकृत चिकित्सा व्यवसायी के पर्यवेक्षण में ही की जाएगी **(पैरा 2.6)** ।

(4) अभिलेख पर कोई तथ्य लाने के लिए जिनसे दर्शित हो कि उसकी गिरफ्तारी के पश्चात् उसके विरुद्ध कोई अपराध किया गया है, संबंधित स्त्री को चिकित्सीय परीक्षा कराने के उसके अधिकार के बारे में जानकारी दी जाएगी **(पैरा 2.8)** ।

(5) चिकित्सीय परीक्षा की रिपोर्ट की एक प्रति उस स्त्री को दी जाएगी **(पैरा 2.7)**

(6) किसी स्त्री से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 160 के अधीन परिप्रश्नों के लिए उसके निवास स्थान से भिन्न किसी स्थान पर हाजिर होने की अपेक्षा नहीं की जाएगी, और इस प्रयोजन के लिए संहिता की धारा 160 का संशोधन करना चाहिए **(पैरा 2.10)** ।

(7) जब अन्वेषण के दौरान किसी स्त्री का कथन अभिलिखित किया जाता है तब उस स्त्री के किसी नातेदार या मित्र या स्त्रियों के कल्याण में हितबद्ध किसी संगठन के किसी प्राधिकृत प्रतिनिधि को उपस्थित रहने की अनुज्ञा दी जाएगी **(पैरा 2.11)** ।

(8) जहां कोई स्त्री ऐसे किसी अपराध के लिए दोषसिद्ध की जाती है जिसको दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 लागू होती है, परिवीक्षा पर या सम्यक् भर्त्सना देकर अपराधी को छोड़ने की न्यायालय की शक्ति का प्रयोग करते समय इस तथ्य का सम्यक् ध्यान रखना चाहिए कि अपराधी एक स्त्री है **(पैरा 2.10)** ।

(9) 14 वर्ष की न्यूनतम अवधि से कम कारावास की अवधि में (उन अपराधियों की जो आजीवन कारावास से दंडित किए गए हैं) कमी (सरकार द्वारा) करने पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 433क द्वारा अधिरोपित प्रतिषेध किसी स्त्री को लागू नहीं होना चाहिए **(पैरा 2.19)** ।

(10) जहां कोई गर्भवती स्त्री कारावास से दंडित की जाती है (चाहे आजीवन या विनिर्दिष्ट अवधि के लिए) वहां न्यायालय को यह निदेश देने की शक्ति होनी चाहिए कि दंडादेश का निष्पादन गर्भ के समापन और उसके पश्चात किसी विनिर्दिष्ट अवधि तक कुछ शर्तों के अधीन रहते हुए निलंबित रहेगा **(पैरा 2.24)** ।

(11) अपने प्रशासनिक पक्ष में उच्च न्यायालय को जिला और सेशन न्यायाधीशों को निदेश देने की शक्ति होनी चाहिए कि वे अपना समाधान करें कि महिला कैदियों की, उन उपबंधों के अनुसार जिनकी हम इस संबंध में सिफारिश कर रहे हैं, संरक्षा की जाती है और उनका उचित ध्यान रखा जाता है ।

उससे अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए उच्च न्यायालय को समुचित अध्युपाय करने के लिए राज्य सरकार से समावेदन करने की शक्ति होनी चाहिए **(पैरा 2.26)** ।

महिला कैदियों के संबंध में निम्नलिखित ठोस संरक्षात्मक अध्युपायों की सिफारिश की जाती है :

(क) जेल में प्रवेश पर किसी महिला कैदी की चिकित्सीय परीक्षा की जानी चाहिए । यदि चिकित्सीय रूप से आवश्यक हो तो उसे किसी महिला घेरे में पृथक रखा जाना चाहिए । अस्थायी रूप से छोड़े जाने के पश्चात् जेल में पुर्नप्रवेश के प्रत्येक अवसर पर वही चर्या अपनाई जानी चाहिए **(पैरा 2.27)** ।

(ख) जहां अभिरक्षा में होते हुए किसी महिला कैदी के गर्भावस्था में होने की शंका है, वहां उसे जिला सरकारी अस्पताल में भेजा जाएगा । उन्नत गर्भावस्था की दशा में वह सरकारी अस्पताल के महिला वार्ड में भेज दी जाएगी **(पैरा 2.27)** ।

(ग) किसी महिला कैदी को एक जेल से दूसरी जेल में, या न्यायालय को या अन्वेषण के लिए अभिवहन के दौरान हथकड़ी नहीं लगाई जाएगी या उसे बेड़ी या क्रासवार पहनने के लिए विवश नहीं किया जाएगा (पैरा 2.28) । इसके अतिरिक्त यदि उससे महिला घेरा छोड़ने की अपेक्षा की जाती है तो उसे मैट्रन या महिला वार्डन के पहरे में ले जाया जाएगा । अभिवहन के दौरान किसी महिला नातेदार को उसके साथ जाने की अनुज्ञा दी जाएगी **(पैरा 2.28)** ।

(घ) जहां स्त्री कैदियों को रखने के लिए उपयुक्त इंतजाम नहीं है वहां, जहां कहीं साध्य हो, उन्हें उपयुक्त संस्था में भेजा जाना चाहिए **(पैरा 2.29)** ।

(ङ) सेशन मुख्यालय से भिन्न स्थानों पर कोई न्यायिक अधिकारी (अधिमानत: कोई महिला न्यायिक अधिकारी) उस जेल का, जहां अभिरक्षा में स्त्रियाँ निरुद्ध की जाती हैं, जेल का निरीक्षण करेगा । ऐसा निरीक्षण प्रत्येक दो मास में कम से कम एक बार किया जाएगा तथा जिला और सेशन न्यायाधीश निरीक्षण रिपोर्ट के प्रकाश में समुचित सिफारिशें कर सकेगा **(पैरा 2.30)** ।

सेशन मुख्यालय में सेशन न्यायाधीश ऐसा निरीक्षण करेगा । उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि स्त्रियों की संरक्षा के लिए उन अध्युपायों का, जिनकी इस रिपोर्ट में सिफारिश की गई है, कार्यान्वयन किया जाता है । इन निरीक्षण रिपोर्टों की प्रतियाँ संबंधित अधिकारियों को भेजी जाएंगी **(पैरा 2.30)** ।

(च) ऊपर आकस्मिक परिदर्शनों के अतिरिक्त, उन जेलों का, जहां स्त्री कैदी हैं, सरकार द्वारा नियुक्त परिदर्शकों द्वारा परिदर्शन किया जाएगा । इन जेल परिदर्शकों में से एक चिकित्सा अधिकारी होना चाहिए और दो सामाजिक कार्यकर्ता होने चाहिएं, जिनमें से, जहां कहीं व्यवहार्य हो, एक कोई स्त्री होगी । दो परिदर्शकों को छह मास में कम से कम एक बार जेल का परिदर्शन करना और सेशन न्यायाधीश को रिपोर्ट करनी चाहिए **(पैरा 2.31)** ।

(छ) ये उपबंध न केवल स्त्री कैदियों को ही लागू होने चाहिए वरन् पुलिस हवालत में, अभिरक्षा में या निवारक निरोध का उपबंध करने वाली किसी विधि के अधीन निरुद्ध व्यक्तियों के रूप में स्त्रियों को भी, इस बात को ध्यान में लिए बिना लागू होने चाहिएं कि स्त्री अन्वेषण, जांच या विचारण के दौरान या दोषसिद्धि आदि के पश्चात् अभिरक्षा में रखी जाती है **(पैरा 2.32)** ।

(12) दंड प्रक्रिया में अंतर्वलित स्त्रियों की चिकित्सीय परीक्षा से संबंधित हमारी व्यापक सिफारिश के परिणामस्वरूप दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 53 का पारिणामिक संशोधन किया जाए **(पैरा 2.6)** ।

(13) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 160(1) में (जो पुलिस द्वारा अन्वेषण के दौरान स्त्रियों को समन करने आदि का प्रतिषेध करती है) कुछ शाब्दिक परिवर्तन किए जाने चाहिए **(पैरा 2.10)** ।

(14) दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 416 का संशोधन किसी गर्भवती स्त्री पर पारित मृत्यु दंडादेश के लघुकरण को आज्ञापक बनाने के लिए करना चाहिए **(पैरा 2.13)** ।

(15) इस समय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 437(1) द्वारा मृत्यु या आजीवन कारावास से दंडनीय किसी अपराध से अभियुक्त किसी व्यक्ति को जमानत पर छोड़ने पर निर्बंधन अधिरोपित किया गया है किन्तु उस उपधारा का प्रथम परंतुक कुछ प्रवर्गों के व्यक्तियों को (16 वर्ष से कम आयु के व्यक्ति स्त्रियों और रोगी तथा शिथिलांग व्यक्ति) जमानत पर छोड़ने का विवेक न्यायालय को देता है ।

सिफारिश यह है कि ऐसे मामलों में न्यायालय यह **निदेश देगा** कि ऐसे व्यक्तियों को जमानत पर छोड़ दिया जाएगा जब तक कि न्यायालय, ऐसे कारणों से, जो अभिलिखित किए जाएंगे, ऐसे व्यक्ति को जमानत पर न छोड़ना उचित समझता है **(पैरा 2.23)** ।

(16) दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 160(1) में (जिसमें यह उपबंध है कि 15 वर्ष से कम के किसी व्यक्ति या किसी स्त्री की परीक्षा केवल उसके निवास स्थान पर ही की जाएगी) आदेश के अतिक्रमण के लिए एक विनिर्दिष्ट दांडिक उपबंध भारतीय दंड संहिता में धारा 166क के रूप में अंत:स्थापित किया जाना चाहिए **(पैरा 2.12)** ।

(17) अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 की धारा 3 के अधीन किसी अपराधी को भर्त्सना देकर छोड़ने की बाबत विनिश्चय करने में न्यायालय को इस तथ्य को भी ध्यान में रखना चाहिए कि अपराधी कोई स्त्री है (जहां दोषसिद्ध किया गया व्यक्ति कोई स्त्री है) **(पैरा 5.8)** ।

(18) अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 की धारा 4(1) का, जो सदाचरण की परिवीक्षा पर कुछ अपराधों के लिए दोषसिद्ध अपराधियों को छोड़ने के लिए न्यायालय को सशक्त करती है, संशोधन यह उपबंध करने के लिए किया जाना चाहिए कि ऐसे छोड़ने की बाबत विनिश्चय करने में न्यायालय इस तथ्य को भी ध्यान में रखेगा कि अपराधी कोई स्त्री है (जहां दोषसिद्ध किया गया व्यक्ति कोई स्त्री है) (**पैरा 5.9**) ।

(19) मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम, 1987 की धारा 37(1) का यह उपबंध करने के लिए संशोधन किया जाना चाहिए कि इस धारा के अंतर्गत आने वाली संस्थाओं के पांच परिदर्शकों में, जहां कहीं व्यवहार्य हो, कम से कम एक स्त्री होगी (**पैरा 6.6**) ।

(20) मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम की धारा 81 के अधीन अपराध (अभिरक्षा में मानसिक रूप से किसी बीमार व्यक्ति का तिरस्कार आदि) को दंडित करने के लिए, ऊपर अपराध के लिए दो वर्ष तक के कारावास या 5,000/- रुपये तक के जुर्माने या दोनों विहित करते हुए एक नई धारा 84क का अंत:स्थापन किया जाना चाहिए (**पैरा 6.9 और 6.10**) ।

इस रिपोर्ट के **उपाबंध 1** में हमारी सिफारिशें सुसंगत अधिनियमितियों के प्ररूप संशोधनों के रूप में दी गई हैं, अर्थात्—

(क) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973;

(ख) भारतीय दंड संहिता;

(ग) अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958; और

(घ) मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम, 1987 ।

हम आशा करते हैं कि ये सिफारिशें, यदि कार्यान्वित की जाती हैं तो अभिरक्षा में स्त्रियों के संकट को बहुत विस्तार तक दूर करेंगी । हम इस रिपोर्ट को इस आशावादी नोट के साथ समाप्त करते हैं ।

ह०/-
(एम० बी० ठक्कर)
अध्यक्ष

ह०/-	ह०/-	ह०/-
(वाई० वी० अंजनेयुलु)	(जी० वी० जी० कृष्णमूर्ति)	(पी० एम० बख्शी)
सदस्य	**सदस्य सचिव**	**सदस्य**

नई दिल्ली,
तारीख 14 दिसम्बर, 1989.

उपाबंध 1

विभिन्न अधिनियमितियों में प्ररूप संशोधनों के रूप में सिफारिशें

सिफारिश—1

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 में निम्नलिखित संशोधन स्त्रियों की गिरफ्तारी और अभिरक्षा से संबंधित एक नया अध्याय जो अध्याय 33क के पश्चात् अंत:स्थापित किया जाएगा, अंत:स्थापित करके करने चाहिए ।

अध्याय 33क

स्त्रियों और बालकों की गिरफ्तारी, परिप्रश्नों और अभिरक्षा के संबंध में विनिर्दिष्ट उपबंध

450क. इस अध्याय का लागू होना—इस अध्याय के उपबंध, उनके अंतर्गत आने वाली बातों के संबंध में इस संहिता के किसी अन्य उपबंध में तत्प्रतिकूल किसी बात के होते हुए भी लागू होंगे (**अध्याय 10 देखें**) ।

450ख. स्त्रियों की गिरफ्तारी—(1) जहां किसी स्त्री को इस संहिता के अधीन गिरफ्तार किया जाना है वहां जब तक कि परिस्थितियां इसके विरुद्ध दर्शित न करें, **गिरफ्तारी की मौखिक सूचना पर उसके अभिरक्षा में समर्पण की उपधारणा की जाएगी** और जब तक कि परिस्थितियों से अन्यथा अपेक्षित न हो या जब तक कि गिरफ्तार करने वाला पुलिस अधिकारी कोई महिला नहीं है, **पुलिस अधिकारी उसकी गिरफ्तारी करने के लिए उस स्त्री के शरीर को वास्तव में नहीं छुएगा** (**पैरा 2.2**) ।

(2) अपरिहार्य परिस्थितियों में के सिवाए, **कोई भी स्त्री सूर्यास्त के पश्चात् और सूर्योदय के पूर्व गिरफ्तार नहीं की जाएगी**, और जहां ऐसी अपरिहार्य परिस्थितियां विद्यमान हैं, गिरफ्तारी करने वाला पुलिस अधिकारी ऐसी गिरफ्तारी करने के लिए निरीक्षक की पंक्ति से अभिन्न पंक्ति के ठीक वरिष्ठ अधिकारी की पूर्व अनुज्ञा, लिखित रिपोर्ट करके अभिप्राप्त करेगा या यदि मामला अत्यन्त आवश्यकता का है तो वह गिरफ्तारी करने के पश्चात् मामले की रिपोर्ट अपने ऐसे ठीक वरिष्ठ अधिकारी को, गिरफ्तारी के कारणों सहित और उपरोक्त रूप में पूर्व अनुज्ञा न लेने के कारणों सहित लिखित रूप में तत्काल रिपोर्ट करेगा और वैसी ही रिपोर्ट उस मजिस्ट्रेट को भी करेगा जिसकी स्थानीय अधिकारिता के भीतर वह गिरफ्तारी की गई है (**पैरा 2.3 देखें**) ।

450ग. स्त्रियों की चिकित्सीय परीक्षा—(1) वह मजिस्ट्रेट जिसके समक्ष गिरफ्तार की गई कोई महिला पेश की जाती है चाहे ऐसी महिला धारा 54 के अधीन अपने शरीर की परीक्षा के लिए प्रार्थना करती है या नहीं, **अभिलेख पर ऐसे तथ्य लाने के लिए जो यह दर्शित करते हों** कि शरीर के विरुद्ध कोई अपराध उसकी गिरफ्तारी के पश्चात् ऐसी महिला की बाबत किया गया है, उसको ऐसी परीक्षा के उसके अधिकार की जानकारी देगा (**पैरा 2.8 देखें**) ।

(यह संशोधन सम्यक् अनुक्रम में पुरुषों को भी लागू किया जा सकता है)

(2) जब कभी किसी महिला के शरीर की परीक्षा या तो धारा 53 के अधीन या धारा 54 के अधीन की जानी है, **तब परीक्षा केवल किसी महिला रजिस्ट्रीकृत चिकित्सा व्यवसायी द्वारा या उसके पर्यवेक्षण के अधीन और शिष्टता का कड़ा ध्यान रखकर की जाएगी** (**पैरा 2.6**) ।

(दंड प्रक्रिया संहिता की वर्तमान धारा 53 की उपधारा (2) को हटाया जाएगा)

(3) धारा 53 या धारा 54 के अधीन परीक्षा करने वाला रजिस्ट्रीकृत चिकित्सा व्यवसायी परीक्षा की रिपोर्ट की एक प्रति गिरफ्तार की गई महिला को तुरन्त निःशुल्क देगा **(पैरा 2.7 देखें)** ।

(यह संशोधन सम्यक् अनुक्रम में पुरुषों को भी लागू किया जा सकता है)

450घ. अन्वेषण के लिए हाजिर होने वाली स्त्रियाँ और बालक—पन्द्रह वर्ष से कम आयु के किसी पुरुष से या किसी स्त्री से उसके निवास स्थान से भिन्न किसी स्थान पर धारा 160 के अधीन हाजिर होने की अपेक्षा नहीं की जाएगी **(पैरा 2.10 देखें)** ।

(दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 160(1) के वर्तमान परंतुक हटाया जाएगा ।)

(2) जहां इस संहिता के अधीन पन्द्रह वर्ष से कम आयु के किसी पुरुष या किसी महिला का कथन या तो अपराध की प्रथम इत्तिल्ला के रूप में या किसी अपराध के अन्वेषण के अनुक्रम में किसी पुरुष पुलिस अधिकारी द्वारा अभिलिखित किया जाता है, **जहां ऐसे पुरुष या स्त्री के किसी नातेदार या मित्र को और स्त्रियों या बालकों के कल्याण में हितबद्ध ऐसे संगठन द्वारा, जो राज्य सरकार द्वारा राजपत्र में अधिसूचना द्वारा इस निमित्त मान्यताप्राप्त है, प्राधिकृत किसी व्यक्ति को भी उस सम्पूर्ण** अवधि के दौरान जिसमें कथन अभिलिखित किया जा रहा है, उपस्थित रहने की अनुज्ञा दी जाएगी **(पैरा 2.11 देखें)** ।

450ङ. संहिता के अधीन भर्त्सना और परिवीक्षा—जहां किसी न्यायालय द्वारा दोषसिद्ध किया गया व्यक्ति कोई स्त्री है, वहां न्यायालय धारा 360 की उपधारा (1) के अधीन परिवीक्षा पर अपराधी के छोड़े जाने के संबंध में या इस धारा की उपधारा (3) के अधीन **सम्यक् भर्त्सना के पश्चात् अपराधी के छोड़े** जाने के संबंध में अपने विवेक का प्रयोग करने में इस तथ्य का सम्यक् ध्यान रखेगा कि अपराधी कोई स्त्री है **(पैरा 5.10 देखें)** ।

450च. आजीवन कारावास से दंडादिष्ट स्त्रियों के निरोध की अवधि—धारा 433क की कोई ऐसी बात ऐसे किसी मामले को लागू नहीं होती है जहां वह व्यक्ति, जिस पर आजीवन कारावास का दंड अधिरोपित किया गया है या जिसकी बाबत मृत्यु दंडादेश का आजीवन कारावास में लघुकरण किया गया है, कोई स्त्री है **(पैरा 2.19 देखें)** ।

450छ. गर्भवती स्त्री और कारावास का निलंबन—(1) जब कोई गर्भवती स्त्री किसी अपराध के लिए दोषसिद्ध की जाती है और न्यायालय उसे आजीवन कारावास या किसी विनिर्दिष्ट अवधि के लिए कारावास से दंडादिष्ट करता है तो न्यायालय, यदि वह इसे ठीक समझता है अपराधी की आयु, चरित्र और पूर्ववृत्त, उन परिस्थितियों को, जिनमें अपराध किया गया था और स्वयं स्त्री की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए निदेश दे सकेगा ।

(क) कि उसके मामले में कारावास के दंडादेश का निष्पादन तब तक निलंबित रहेगा जब तक कि बालक का प्रसव नहीं हो जाता है या गर्भ का अन्यथा समापन नहीं हो जाता है या उसके पश्चात् ऐसी अवधि समाप्त नहीं हो जाती है जो न्यायालय विनिर्दिष्ट करे, और

(ख) कि दंडादेश के निष्पादन के निलंबन की ऐसी अवधि के दौरान वह—

(i) उपस्थित होने और ऐसी अवधि की समाप्ति पर;

(ii) इस दौरान शांति कायम रखने और सदाचारी होने, तथा ऐसी अन्य शर्तों का, यदि कोई हों, जो न्यायालय अधिरोपित कर सकेगा, अनुपालन करने के लिए प्रतिभुओं सहित या उनके बिना उसके बंधपत्र निष्पादित करने पर उसे छोड़ दिया जाएगा ।

(2) इस धारा के अधीन कोई आदेश किसी अपील न्यायालय द्वारा या उच्च न्यायालय द्वारा या सेशन न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण की अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए किया जा सकेगा ।

(3) जब किसी स्त्री की बाबत कोई आदेश इस धारा के अधीन किया गया है तो उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय, अपील पर जब ऐसे न्यायालय को अपील का अधिकार विद्यमान है या जब वह पुनरीक्षण की

अपनी शक्तियों का प्रयोग कर रहा हो, ऐसे आदेश को न्याय के हित में अपास्त या उपांतरित कर सकेगा ।

(4) धारा 121, 124 और 373 के उपबंध, जहां तक साध्य हों, इस धारा के उपबंधों के अनुसरण में दिए गए प्रतिभुओं के मामले में लागू होंगे ।

(5) उपधारा (1) के अधीन किसी स्त्री को छोड़ने का निदेश देने के पूर्व न्यायालय का समाधान किया जाएगा कि वह स्त्री या उसके प्रतिभू का, यदि कोई हो, उस स्थान में, जिसमें न्यायालय कार्य करता है, या जिसमें उस स्त्री के, नामित अवधि के दौरान शर्तों के अनुपालन के लिए, रहने की संभाव्यता है, कोई नियत निवास स्थान या उपजीविका है ।

(6) यदि वह न्यायालय जिसने उस स्त्री को दोषसिद्ध किया था या उस न्यायालय का, जिसने उसके मूल अपराध के लिए उस स्त्री की बाबत कार्रवाई की होती, समाधान हो जाता है कि वह स्त्री अपने मुचलके की किन्हीं शर्तों का अनुपालन करने में असफल रही है । तो वह उसकी गिरफ्तारी के लिए वारंट निकाल सकेगा और पक्षकारों को सुनने के पश्चात् निलंबन आदेश को विखंडित या अपास्त कर सकेगा और यह निदेश दे सकेगा कि दंडादेश का उस अवधि के लिए, जिसके लिए उसे दंडादिष्ट किया गया है, तुरन्त निष्पादन किया जाए ।

(7) जहां वह अवधि जिसके लिए किसी स्त्री के विरुद्ध पारित कारावास के दंडादेश का निष्पादन न्यायालय द्वारा उपधारा (1) के अधीन निलंबित कर दिया जाता है, समाप्त हो जाती है, वहां—

(क) वह स्त्री अपने आपको उस न्यायालय को या ऐसे अन्य न्यायालय को जो उस न्यायालय द्वारा उसके आदेश में निर्दिष्ट किया जाए, समर्पित करेगी;

(ख) यदि वह इस प्रकार समर्पण नहीं करती है तो वह ऐसे न्यायालय द्वारा निकाले जाने वाले वारंट के अधीन गिरफ्तार की जाएगी; और

(ग) वह न्यायालय जिसके समक्ष यथास्थिति वह समर्पण करती है या वह न्यायालय जिसके समक्ष वह उसके वारंट के अधीन गिरफ्तारी पर पेश की जाती है, दंडादेश का, उस अवधि के लिए, जिसके लिए वह दंडादिष्ट की गई है, निष्पादन किए जाने का निदेश देगा ।

(8) जहां किसी स्त्री की बाबत कारावास के दंडादेश का निष्पादन इस धारा के उपबंधों के अधीन निलंबित कर दिया गया है, वहां निलंबन की अवधि, उस पर अधिरोपित कारावास की अवधि के विरुद्ध मुजरा नहीं की जाएगी और ऐसी स्त्री का दंडादेश के अनुसार कारावास भोगने के दायित्व दंडादेश के निलंबन की अवधि समाप्ति पर उस निलंबन से अप्रभावित रहेगा **(पैरा 2.24 देखें)** ।

चंपालाल बनाम महाराष्ट्र राज्य अखिल भारतीय रिपोर्टर, उच्चतम न्यायालय 791, (1982) दंड विधि जर्नल (दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 428 का मुकाबला) में विनिश्चय से तुलना करें ।

450ज. महिला कैदी—उच्च न्यायालय अपने प्रशासनिक पक्ष पर सेशन न्यायाधीशों को अपना यह समाधान करने का निदेश दे सकेगा कि महिला कैदियों की संरक्षा की जाती है और धारा 450झ से 450ढ में दिए गए रक्षोपायों के अनुसार उनकी समुचित देखभाल की जाती है और ऐसे अध्युपाय कर सकेगा जो आवश्यक कार्रवाई करने के लिए राज्य सरकार से समावेदन करने के लिए वांछनीय हों **(पैरा 2.26 देखें)** ।

450झ. चिकित्सीय परीक्षा—निम्नलिखित उपबंधों का महिला कैदियों की चिकित्सीय परीक्षा और पारिणामिक कार्रवाई की बाबत यथासाध्य पालन किया जाएगा :—

(क) जेल में भर्ती पर, प्रत्येक महिला कैदी की किसी **महिला चिकित्सा अधिकारी** द्वारा चिकित्सीय परीक्षा की जाएगी और जब कभी चिकित्सीय कारणों से आवश्यक समझा जाए, उसे ऐसी अवधि के लिए, जो संबंधित चिकित्सा अधिकारी की राय में आवश्यक हो, किसी महिला घेरे में पृथक् रखा जाएगा ।

6—5 Min. of L. & J./ND/90

(ख) प्रत्येक महिला कैदी की, जमानत, परोल या फर्लो पर छोड़े जाने के पश्चात् उसके जेल में पुनः प्रवेश पर चिकित्सीय परीक्षा की जाएगी ।

(ग) यदि भारसाधक अधिकारी या चिकित्सा अधिकारी को शंका है कि कोई महिला कैदी गर्भवती है तो महिला कैदी को विस्तृत परीक्षा और रिपोर्ट के लिए जिला अस्पताल में भेजा जाएगा ।

(घ) जिला सरकारी अस्पताल का महिला चिकित्सा अधिकारी जिसके पास, महिला कैदी को खंड (ग) के अधीन निर्देशित किया गया है, उसके स्वास्थ्य, गर्भ की स्थिति, गर्भ की अवधि और प्रसव की अधिसंभाव्य तारीख तथा विशेष आहार को, यदि कोई हो, जो विहित किया जाएगा या अन्य अध्युपाय, जो किए जाएंगे, प्रमाणित करेगा ।

(ङ) महिला कैदी की स्त्री रोग संबंधी परीक्षा तत्पश्चात् जिला सरकारी अस्पताल में किसी महिला चिकित्सा अधिकारी द्वारा की जाएगी और महिला कैदी की समुचित प्रसवार्थ और प्रसव पश्चात् देखरेख चिकित्सीय सलाह के अनुसार की जाएगी ।

(च) उन्नत गर्भावस्था के मामले में महिला कैदी को सरकारी अस्पताल के महिला वार्ड में भेजा जाएगा ।

(छ) खण्ड (च) में निर्दिष्ट कोई गर्भवती महिला कैदी किसी बालक के जन्म के पश्चात् पन्द्रह दिन से अन्यून के लिए या ऐसी दीर्घतर अवधि के लिए जिसकी स्त्री रोग विशेषज्ञ द्वारा सलाह दी जाए, सरकारी अस्पताल के महिला वार्ड में रखी जाएगी (पैरा 2.27 देखें) ।

450ण. अभिवहन—(1) किसी महिला कैदी को हथकड़ी नहीं लगाई जाएगी और एक जेल से दूसरी जेल को या न्यायालय को ले जाए जाने के प्रयोजन से या अन्वेषण के लिए उसके अभिवहन के दौरान उससे कोई बेड़ियां या क्रास बार पहनने की अपेक्षा नहीं की जाएगी ।

(2) किसी महिला कैदी को मेट्रन या महिला वार्डन के पहरे में ले जाया जाएगा, यदि उससे महिला घेरा छोड़ने की अपेक्षा की जाती है और उसके घेरे में वापसी या जेल से छोड़े जाने तक ऐसी मैट्रन या महिला वार्डन कैदी के साथ रहेगी ।

(3) महिला कैदी की किसी महिला नातेदार को किसी महिला कैदी के साथ एक जेल से दूसरी जेल को या न्यायालय को ले जाए जाने के प्रयोजन से या अन्वेषण के लिए उसको अभिवहन के दौरान रहेगी (पैरा 2.28 देखें) ।

450ढ. निरोध का स्थान—जहां किसी स्त्री को गिरफ्तार किया जाता है और अनन्य रूप से स्त्रियों के लिए किसी निरोध-स्थान में अभिरक्षा में उसे रखने के लिए उस परिक्षेत्र में कोई उपयुक्त इंतजाम नहीं है वहां वह स्त्रियों या बालकों के ग्रहण, देखरेख, संरक्षा और कल्याण के लिए स्थापित और अनुरक्षित किसी ऐसी संस्था में, जो स्त्री और बालक (अनुज्ञापन), अधिनियम, 1956 के अधीन अनुज्ञप्त हैं या यथासाध्य राज्य सरकार द्वारा मान्यताप्राप्त किसी संस्था में, उन मामलों के सिवाय भेजी जाएगी, जहां किसी विशेष विधि द्वारा अपेक्षित है कि उसे किसी संरक्षा गृह या ऐसी विशेष विधि के प्रयोजनों के लिए प्राधिकृत अन्य निरोध स्थान में भेजा जाना चाहिए । (पैरा 2.14 और 2.19 देखें)

450ठ. जेलों का निरीक्षण—(1) कोई न्यायिक अधिकारी, अधिमानतः कोई महिला अधिकारी (जहां कोई उपलब्ध है) जो सेशन न्यायाधीश द्वारा नाम निर्दिष्ट किया जाएगा, या जहां कोई महिला न्यायिक अधिकारी उपलब्ध नहीं है, वहां कोई पुरुष न्यायिक अधिकारी जिसके साथ कोई महिला सामाजिक कार्यकर्ता होगी, सेशन न्यायालय के मुख्यालय से भिन्न स्थानों पर दो मास में कम से कम एक बार निरीक्षण के लिए जेलों का परिदर्शन :—

(i) अपनी शिकायतों की संसूचना देने के लिए महिला कैदियों को अवसर प्रदान करने के लिए करेगा;

(ii) जेलों में दशाओं को अभिनिश्चित करने के लिए और यह सत्यापित करने के लिए कि क्या अपेक्षित सुविधाएँ दी जा रही हैं और विधि के उपबंधों का पालन किया जा रहा है, करेगा ।

(iii) ऊपर बातों के संबंध में जेलों के भारसाधक अधिकारियों की गलतियों का सेशन न्यायाधीश की जानकारी में लाने की दृष्टि से करेगा और प्रत्येक ऐसे निरीक्षण की रिपोर्ट तैयार करेगा ।

(2) सेशन न्यायाधीश, सेशन न्यायालय के मुख्यालय पर अवस्थित जेलों के वैसे ही निरीक्षण करेगा ।

(3) सेशन न्यायाधीश इस स्कीम के अधीन निरीक्षणों से संबंधित निरीक्षण रिपोर्टों की प्रतियाँ पुलिस आयुक्त (या अन्य तत्समान अधिकारी), महानिरीक्षक (कारागार) और राज्य सरकार को भेजेगा और ऐसी सिफारिशें कर सकेगा जो मामले के तथ्यों पर और परिस्थितियों में अपेक्षित हों ।

(4) यदि प्राधिकारी सेशन न्यायाधीश की सिफारिशों को कार्यान्वित करने में असफल रहते हैं तो मामला उचित कार्रवाई के लिए उच्च न्यायालय की जानकारी में लाया जाएगा (पैरा 2.30 देखें) ।

450ड. जेल परिदर्शकों की नियुक्ति—(1) यथास्थिति, केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार प्रत्येक जिले या जेल के लिए तीन से अन्यून परिदर्शक नियुक्त करेगी जिनमें से एक कोई चिकित्सा अधिकारी होगा और दो सामाजिक कार्यकर्ता होंगे, जिनमें से जहां तक साध्य हो कम से कम एक कोई स्त्री होगी ।

(2) दो से अन्यून परिदर्शक, जिनमें से कम से कम एक कोई महिला सामाजिक कार्यकर्ता होगी प्रत्येक छह मास में एक बार उस जिले में, जिसकी बाबत वे नियुक्त किए गए हैं, जेल के प्रत्येक भाग का, महिला कैदियों की बाबत उसमें विद्यमान दशाओं का और कि क्या अपेक्षित सुविधाएँ दी जा रही हैं और विधि के उपबंधों का पालन किया जा रहा है और क्या यथास्थिति सेशन न्यायाधीश या उच्च न्यायालय या उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निदेशों का पालन किया जा रहा है, अभिनिश्चय करने की दृष्टि से संयुक्त निरीक्षण करेंगे ।

(3) परिदर्शक अपने निरीक्षण की एक रिपोर्ट सेशन न्यायाधीश को भेजेंगे जो इस रिपोर्ट के संबंध में उसी रीति से कार्यवाही करेगा जो किसी न्यायिक अधिकारी द्वारा प्रस्तुत की गई निरीक्षण रिपोर्ट की बाबत धारा 450ठ में उपबंधित है (पैरा 2.31 देखें) ।

450ढ परिभाषाएँ—धारा 450ज से 450ड, के (जिनके अंतर्गत ये दोनों धाराएँ हैं) प्रयोजनों के लिए—

(क) "महिला कैदी" से ऐसी स्त्री अभिप्रेत है जो चाहे अन्वेषण, जांच या विचारण के दौरान या दोषसिद्धि के पश्चात् या निवारक निरोध का उपबंध करने वाली किसी विधि के अधीन जेल में निरुद्ध की गई है, और

(ख) "जेल" के अंतर्गत कोई पुलिस हवालात, कोई कारागार और ऐसा कोई स्थान है जहां व्यक्ति निवारक निरोध का उपबंध करने वाली किसी विधि के अधीन निरोध में रखे जाते हैं (पैरा 2.32 देखें) ।

सिफारिश 2

निम्न प्रकार के कुछ अन्य संशोधन भी दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 में आवश्यक हैं—

(1) संहिता की धारा 53(2) को हटा देना चाहिए (पैरा 2.26 देखें) ।

7—5 Min. of L. & J./ND/90

(यह पूर्वोक्त सिफारिश सं० 1 द्वारा किए गए परिवर्तनों के परिणामस्वरूप है । प्रस्तावित धारा 450ग(2) देखें) ।

(2) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 160(1) में से परंतुक को हटा देना चाहिए **(पैरा 2.10 देखें)** ।

(दंड प्रक्रिया संहिता की प्रस्तावित धारा 450घ के परिणामस्वरूप)।

(3) संहिता की धारा 416 को निम्न रूप में पुनरीक्षित किया जाना चाहिए ।

"416. गर्भवती स्त्री को मृत्यु दंडादेश—यदि वह स्त्री, जिसे मृत्यु दंडादेश दिया गया है, गर्भवती पायी जाती है, तो उच्च न्यायालय दंडादेश का आजीवन कारावास के रूप में लघुकरण करेगा **(पैरा 2.13 देखें)** ।

(4) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 437(1) के प्रथम परंतुक को निम्न रूप में पुनरीक्षित किया जाना चाहिए :

"परन्तु यह कि जहां खंड (i) या खंड (ii) में निर्दिष्ट व्यक्ति सोलह वर्ष से कम आयु का है या कोई स्त्री या कोई रोगी या शिथिलांग व्यक्ति है वहां न्यायालय निदेश देगा कि ऐसा व्यक्ति जमानत पर छोड़ दिया जाए, **जब तक कि न्यायालय, ऐसे कारणों से जो अभिलिखित किए जाएंगें**, ऐसे व्यक्ति को जमानत पर छोड़ना उचित नहीं समझता है" **(पैरा 2.23 देखें)** ।

सिफारिश 3

भारतीय दंड संहिता का निम्नलिखित रीति में संशोधन किया जाना चाहिए —

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 160(1) में (इस प्रभाव का आदेश कि 15 वर्ष से कम आयु के किसी व्यक्ति या किसी स्त्री की परीक्षा केवल उसके निवास स्थान पर की जाएगी) दिए गए आदेश के अतिक्रमण के लिए एक विशेष दांडिक उपबंध अंत:स्थापित किया जाना चाहिए । प्रस्तावित उपबंध (धारा 166क) निम्नलिखित प्रकार का हो सकता है :—

"166क जो कोई लोक सेवक होते हुए —

(क) किसी अपराध या अन्य बात के अन्वेषण के प्रयोजन के लिए किसी व्यक्ति की किसी स्थान में हाजिरी अपेक्षित करने से उसे प्रतिषिद्ध करने वाली विधि के किसी निदेश की जानते हुए अवज्ञा करेगा, या

(ख) उस रीति को, जिसमें वह ऐसा अन्वेषण संचालित करेगा, विनियमित करने वाली विधि के किसी अन्य निदेश की जानते हुए अवज्ञा करेगा, कारावास से, जिसकी अवधि एक वर्ष तक की हो सकेगी या जुर्माने से या दोनों से दंडित किया जाएगा ।"

प्रस्तावित अपराध (धारा 166क—भारतीय दंड संहिता) किसी मजिस्ट्रेट द्वारा संज्ञेय, जमानतीय और विचारणीय होनी चाहिए **(पैरा 2.12देखें)** ।

सिफारिश 4

अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 का निम्नलिखित रीति में संशोधन किया जाना चाहिए :—

क

अपराधी परीवीक्षा अधिनियम, 1958 की धारा 3 (जो भर्त्सना के पश्चात् किसी दोषसिद्ध अपराधी को छोड़ने की न्यायालय की शक्ति के संबंध में है) का (इसके अंतिम भाग का, मुख्य पैरा) यह उपबंध करते हुए संशोधित किया जाना चाहिए कि ऐसे छोड़ने की बाबत विनिश्चय करने में न्यायालय मामले की परिस्थितियों

का जिसके अंतर्गत अपराध की प्रकृति और अपराधी के चरित्र **(जैसा इस समय है) और इस तथ्य का कि** अपराधी कोई स्त्री **है**, ध्यान रखेगा **(पैरा 5.8 देखें)**

ख

अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 की धारा 4(1) का (मुख्य पैरा) जो न्यायालय को कुछ अपराधों के लिए दोषसिद्ध किए गए अपराधियों को **सदाचरण की परिवीक्षा पर** छोड़ने के लिए सशक्त करती **है, उसी** प्रकार संशोधन किया जाना चाहिए जिस प्रकार अधिनियम की धारा 3 का संशोधन किये जाने की सिफारिश की गई है । अर्थात् **न्यायालय इस तथ्य का भी ध्यान रखेगा कि अपराधी कोई स्त्री है** (पैरा 5.9 देखें) ।

सिफारिश 5

मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम, 1987 का संशोधन निम्नलिखित रीति में किया जाना चाहिए :—

क

मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम, 1987 की धारा 37(1) का संशोधन यह उपबंध करने के लिए किया जाना चाहिए कि इस धारा के अंतर्गत आने वाली संस्था के **पांच परिदर्शकों में**, उस धारा में परिकल्पित दो सामाजिक कार्यकर्ताओं में से जहां कहीं साध्य हो कम से कम एक कोई स्त्री होगी **(पैरा 6.6)**।

ख

मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम, 1987 की धारा 81 के अधीन अपराध **(अभिरक्षा में किसी मानसिक रूप से बीमार व्यक्ति के तिरस्कार आदि)** के लिए **ऊपर दिए गए अपराध के लिए दो वर्ष तक के कारावास का, दंड** या 5000 रूपये तक का जुर्माना या दोनों विहित करते हुए एक नई धारा 84क अधिनियम में अंत:स्थापित की जानी चाहिए **(पैरा 6.9 और 6.10 देखें)** ।

उपाबन्ध 2

कैदियों संबंधी हाल के कुछ विनिर्णयों की सूची

1. **डी० एम० पटनायक बनाम आन्ध्र प्रदेश राज्य**, अखिल भारतीय रिपोर्टर उच्चतम न्यायालय 2092, 1975(3) उच्चतम न्यायालय मामले 185 ।
2. **हीरालाल मलिक बनाम बिहार राज्य** (1977) 4 उच्चतम न्यायालय मामले 44, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1977, उच्चतम न्यायालय 2236 ।
3. **मुहम्मद ग्यासुद्दीन बनाम आन्ध्र प्रदेश राज्य** (1977) 3 उच्चतम न्यायालय मामले 287, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1977, उच्चतम न्यायालय 1926 ।
4. **सुनील बत्रा बनाम दिल्ली प्रशासन**, (1978) 4 उच्चतम न्यायालय मामले 494, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1978, उच्चतम न्यायालय 1675 ।
5. **चार्लस सोभराज बनाम दिल्ली प्रशासन** (1978) 4 उच्चतम न्यायालय मामले 104, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1978, उच्चतम न्यायालय 1514 ।
6. **माधव हायकोट बनाम महाराष्ट्र राज्य** (1978) 3 उच्चतम न्यायालय मामले 544, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1978, उच्चतम न्यायालय 1548 ।
7. **जी नरसिम्हलु बनाम लोक अभियोजक**, आन्ध्र प्रदेश, (1978) 1 उच्चतम न्यायालय मामले 240, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1978, उच्चतम न्यायालय 429 ।
8. **ला. विजय कुमार बनाम लोक अभियोजक**, (1978) 4 उच्चतम न्यायालय मामले 196, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1978, उच्चतम न्यायालय 1485 ।

9. मेनिका गांधी बनाम भारत संघ, (1978) 1 उच्चतम न्यायालय मामले 248, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1978, उच्चतम न्यायालय 597। (इस मामले का कैदियों संबंधी मामलों में सहारा लिया गया है)।
10. हुसैन आरा खातून बनाम गृह सचिव, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1979, उच्चतम न्यायालय 1360, 1980(1) उच्चतम न्यायालय मामले 81 ।
11. हुसैन आरा खातून बनाम बिहार राज्य, 1—5 (1980) 1 उच्चतम न्यायालय मामले 93।
12. धर्मवीर सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (1979) 3 उच्चतम न्यायालय मामले 645, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1979, उच्चतम न्यायालय 1595 (कार्य प्रशिक्षण)।
13. मंटू मजूमदार बनाम बिहार राज्य (1980) 2 उच्चतम न्यायालय मामले 406, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1980, उच्चतम न्यायालय 847।
14. प्रेम शंकर बनाम दिल्ली प्रशासन (1980) 3 उच्चतम न्यायालय मामले 526, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1535 (हथकड़ी लगाई गई)।
15. सुनील बत्रा बनाम दिल्ली प्रशासन, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1978, उच्चतम न्यायालय 1675, 1978(4) उच्चतम न्यायालय मामले 494।
16. सुनील बत्रा बनाम दिल्ली प्रशासन, (1980) 3 उच्चतम न्यायालय मामले 448, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1980, उच्चतम न्यायालय 1579 (शारीरिक संरक्षा)।
17. किशोर सिंह बनाम राजस्थान राज्य, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1981, उच्चतम न्यायालय 625, (1981) 1 उच्चतम न्यायालय मामले 503 (कैदियों को यातना)।
18. नंदलाल बनाम राज्य, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1981, उच्चतम न्यायालय 2041 (परामर्श)।
19. फ्रांसिस कोरेली बनाम दिल्ली संघ राज्यक्षेत्र (1981) 1 उच्चतम न्यायालय मामले 608, अखिल भारतीय रिपोर्टर, 1981 उच्चतम न्यायालय 746 (1941), 2 उच्चतम न्यायालय रिपोर्टें 516।
20. वीणा सेठी बनाम बिहार राज्य, (1982) 2 उच्चतम न्यायालय मामले 583, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1983, उच्चतम न्यायालय 339 ।
21. राकेश कौशिक बनाम श्री० एल० विज, अधीक्षक, केन्द्रीय जेल, नई दिल्ली (1980) अनुपूरक उच्चतम न्यायालय मामले 183, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1981, उच्चतम न्यायालय 1767 ।
22. कदरा पहाड़िया बनाम बिहार राज्य, (1981) 3 उच्चतम न्यायालय मामले 671, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1981, उच्चतम न्यायालय 939।
23. प्रभादत्त बनाम भारत संघ, (1982) 1 उच्चतम न्यायालय मामले 1, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1982, उच्चतम न्यायालय 6।
24. हरबंस सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (1982) 2 उच्चतम न्यायालय मामले 101, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1982, उच्चतम न्यायालय 849।
25. मुन्ना बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (1982) 1 उच्चतम न्यायालय मामले 545, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1982, उच्चतम न्यायालय 806।
26. संत और बनाम बिहार राज्य, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1982, उच्चतम न्यायालय 1470, 1982(3) उच्चतम न्यायालय मामले 131।
27. शीला बर्से बनाम महाराष्ट्र राज्य, (1983) 2 उच्चतम न्यायालय मामले 96, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1983, उच्चतम न्यायालय 378।
28. मेरी एंड्रे लेक्लेरी बनाम राज्य, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1983, उच्चतम न्यायालय 1092, 1984(2) उच्चतम न्यायालय मामले 443।
29. खतरी बनाम बिहार राज्य, (1983) 2 उच्चतम न्यायालय मामले 266।
30. रुदूल साह बनाम बिहार राज्य, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1983, उच्चतम न्यायालय 1086 (मानसिक रूप से बीमार व्यक्ति)।
31. श्रीनिवास बनाम दिल्ली प्रशासन (1982) 3 उच्चतम न्यायालय मामले 209, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1982, उच्चतम न्यायालय 1391।
32. शीला बर्से बनाम महाराष्ट्र राज्य, (1987) 4 उच्चतम न्यायालय मामले 373।

33. माथुर बनाम बिहार राज्य, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1984, उच्चतम न्यायालय 1894, 1984(4) उच्चतम न्यायालय मामले 90।
34. राज्य बनाम प्रभाकर, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1966, उच्चतम न्यायालय 424, (1966) 1 उच्चतम न्यायालय जर्नल 679 (अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य)।
35. शीला बर्से बनाम सचिव, बालक सहायता सोसाइटी, (1987) 3 उच्चतम न्यायालय मामले 50, 54; अखिल भारतीय रिपोर्टर 1987, उच्चतम न्यायालय 656।
36. रमेश कुमार सिंह बनाम बिहार राज्य, (1987) अनुपूरक उच्चतम न्यायालय मामले 335।
37. पृथ्वीराज चक्रवर्ती बनाम दिल्ली प्रशासन, न्यायिक अधिकरण 1988(4) उच्चतम न्यायालय 773 (मध्यवर्ती कैदी)।
38. शीला बर्से बनाम भारत संघ, न्यायिक अधिकरण 1988(3) उच्चतम न्यायालय 15।

टिप्पण और निर्देश

अध्याय 2

1. भारत का विधि आयोग, 84वीं रिपोर्ट (बलात्संग और सहबद्ध अपराध मूल विधि, प्रक्रिया और साक्ष्य के कुछ प्रश्न) पृष्ठ 14, पैरा 3.5 से 3.8 (अप्रैल 1980) ।
2. पूर्वोक्त ।
3. शीला बर्से बनाम राज्य, अखिल भारतीय रिपोर्टर, 1983, उच्चतम न्यायालय 378, 382 पैरा 4(7) ।
4. डी० जे० बाघेला (1985) दंड विधि जर्नल 974 (गुजरात) ।
5. पैरा 2.12 के नीचे देखें ।
6. भारत का विधि आयोग, 84वीं रिपोर्ट (बलात्संग और सहबद्ध अपराध मूल विधि, प्रक्रिया और साक्ष्य के कुछ प्रश्न) पृष्ठ 17, पैरा 3.17 और 3.18 (अप्रैल 1980) ।
7. भारत का विधि आयोग, 84वीं रिपोर्ट (बलात्संग और सहबद्ध अपराध, मूल विधि, प्रक्रिया और साक्ष्य के कुछ प्रश्न) पृष्ठ 18, पैरा 3.24 और 3.25 (अप्रैल 1980) ।
8. भारत का विधि आयोग, 84वीं रिपोर्ट (बलात्संग और सहबद्ध अपराध मूल विधि, प्रक्रिया और साक्ष्य के कुछ प्रश्न) पृष्ठ 16 और 17, पैरा 13.6 से 13.20 (अप्रैल 1980) ।
9. पैरा 2.15 से 2.19 के नीचे देखें ।
10. भारत का विधि आयोग, 84वीं रिपोर्ट (बलात्संग और सहबद्ध अपराध मूल विधि, प्रक्रिया और साक्ष्य के कुछ प्रश्न) पृष्ठ 14 और 15, पैरा 3.9 और 3.10 (अप्रैल 1980) ।
11. शंभाजी (1974) 1 उच्चतम न्यायालय मामले 196 ।
12. नायब सिंह बनाम पंजाब राज्य, (1983) दंड विधि जर्नल 1345 (उच्चतम न्यायालय) ।
13. माडूराम बनाम भारत संघ, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1980, उच्चतम न्यायालय 2147 (1980) दंड विधि जर्नल 1440 ।
14. पैरा 2.20 के नीचे देखें ।
15. आन्ध्र प्रदेश राज्य बनाम बल्लभगारम रवि (1984) दंड विधि जर्नल 1511 (उच्चतम न्यायालय) ।
16. माडूराम बनाम भारत संघ, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1980, उच्चतम न्यायालय 2147 (1980) दंड विधि जर्नल 1440 ।
17. रूकमनी देवी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (1989) दंड विधि जर्नल 548, इलाहाबाद (वी०पी० माथूर और एन० एम० लाल न्यायाधीश) ।
18. पूर्वोक्त पैरा 2.19 देखें ।
19. धारा 437(1) के पाठ के लिए पैरा 2.22 के नीचे देखें ।

अध्याय 4

1. सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश 16, नियम 10(3) ।
2. सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश 38, नियम 1 ।
3. सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 51 और आदेश 21, नियम 30 के साथ पठित उसका आदेश 21, नियम 32 और उससे अगले नियम ।
4. पूर्वोक्त पैरा 1.1 ।

अध्याय 5

1. पूर्वोक्त पैरा 5.2 और 5.3 ।
2. पूर्वोक्त पैरा 5.4 ।
3. पूर्वोक्त पैरा 5.4 ।
4. पूर्वोक्त पैरा 5.2 ।
5. पुलिंग रूप में शब्दों को बदलना आवश्यक नहीं है । साधारण खंड अधिनियम, 1887 की धारा 13 के नीचे देखें ।

अध्याय 6

1. पूर्वोक्त पैरा 6.5 ।
2. पूर्वोक्त पैरा 6.9 ।
3. पूर्वोक्त अध्याय 3 ।
4. पूर्वोक्त पैरा 6.9 ।
5. पूर्वोक्त पैरा 6.8 ।
6. मेडिकल जर्नल आफ़ हैल्थ, इशु आन ह्यूमन राइट्स एण्ड हैल्थ, सितम्बर, दिसम्बर 1988 जैसा उसका सारांश अमान जेसानी द्वारा दिया गया है "मेडिसन एट रिस्क". (22 जुलाई, 1989) इकानोमिक एंड पोलिटिकल वीकली, पृष्ठ 1633 ।

अध्याय 7

1. पूर्वोक्त अध्याय 2 ।
2. पूर्वोक्त अध्याय 3 ।
3. पूर्वोक्त अध्याय 1 ।
4. पूर्वोक्त अध्याय 2 और 5 ।

अध्याय 8

1. पूर्वोक्त अध्याय 2 ।
2. पूर्वोक्त अध्याय 5 ।

अध्याय 9

1. माडूराम बनाम भारत संघ, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1980, 2147 पैरा 15, 16 और 23 ।

अध्याय 10

1-2. यह संशोधन सम्यक् अनुक्रम में पुरुषों को भी लागू किया जा सकता है ।
3. वर्तमान धारा 160(1) के परंतुक को हटाया जाएगा ।

PLD.92.CXXXV (H)
300-1990 (DSK IV)

Price : (Inland) *Rs.* 308.00 (Foreign) £ 35.91 *or* $ 110 88 *Cents.*

प्रबंधक, भारत सरकार-मुद्रणालय, नाशिक-422 006 द्वारा मुद्रित
तथा प्रकाशन नियंत्रक भारत सरकार, दिल्ली-110054 द्वारा प्रकाशित
1992